# प्रवेशिका.

उस काल, उस समयमें (अवसर्पिणीके चौथे आरेमें) चंपा नगरी थी. (इसका वर्णन उव्वाई सूत्रसे जान पडेगा.) इस नगरीके वाहिर ईशान कोनमें नन्दनवन समान उद्यान था. इसमें पूर्णभद्र यक्षका देहरा था. इस उद्यानमें श्री महावीर प्रभुके शिष्य आर्य सुधर्म स्वामी पधारे। उन्हें वन्दना कर उनके शिष्य जम्बू स्वामीने पूछाः हे पूज्य! श्रमण भगवान श्री महावीर स्वामी जो मोक्षको प्राप्त हो गये हैं उन्होंने सप्तम अंग जो उपासक दशांग सूत्र उसके अर्थ किस तरह प्ररुपित किये हैं? कृपा कर फरमांयगे?

आर्य सुधर्म स्वामीने इस प्रार्थनाको स्वीकार की और श्री उपासक दशांग सूत्रके दश अंग इस प्रकार फरमाने लगे.

# अध्ययन १ ला—आनन्द गाथापति.

वाणिज्यग्राम नगरमें जितशत्रु नामका राजा राज्य करता था। वहांपर एक बडा भारी धनवान आनन्द नामका गाथापति (गृहस्थ) रहता था। वह इतना धनवान था कि चार कोटि सुवर्ण जमीनमें गाड रखता था। चार कोटि सुवर्णसे व्यापार करता था और चार कोटि सुवर्णसे घरको सजाया था।

उसके यहां १०,००० गायोंका १ गोकुल ऐसे ४ गोकुल थे.*

इतना धनवान होने पर भी और ऐसा जीवदयाधारी होनेपर भी आनन्द गाथापति (ऐसा चतुर था कि) राजपुरुष, सार्थवाह, कुटुम्बी, घरके मनुष्य आदि सब क्या गुप्त विषयमें और क्या व्यवहारकी बातोंमें इसकी सलाह लेते थे। यह कुटुम्बमें स्थम्भके समान था।

आनन्दकी पत्नी शिवानंदा भी बडी रुप वाली ३२ लक्षण और ६४ कलामें प्रवीण थी। स्त्री पुरुष एक दोनोंको बडे

---

* सद्गृहस्थ कैसा लायक होता है यह इससे जान पडेगा। वह पैसावाला हो इतना ही नहीं वह गोप्रतिपालक भी होना चाहिए। गंभीर होना चाहिए। समझदार होना चाहिए। सब कोई उसे पूछे, गरीबोंको निभावे, गुप्त मदद दे। अपना पेट भर लेनेवाला सख्स 'सद्गृहस्थ' नहीं हो सकता। कुटुम्बियोंका पोषण करे, नगरवालोंको सलाह दे। इतना ही क्यों गूंगे जानवरों को भी पाले—पोषे। (पहिले समयमें हरेक साहुकार गोकुल रखते थे—यानी हजारो गायोंको पालते थे। आज रसकसका मुख्य साधन जो गाय भैंसे हैं उनकी हिंसा बहुत होनेसे रसकस कम हो गये हैं। मनुष्य दुबले हो गये हैं और जमीन नीरस हो गई है।)

प्रेमसे चाहते थे । वाणिज्य नगरके वाहिर ईशान कोनमें दूतीपलाश नामक उद्यान था और कोलाग नामका *सन्निवेश था । वहांपर आनन्दके इष्ट मित्र, परिजन, स्वजन, व्यापारी आदि बहुतसे मनुष्य रहतेथे । ये भी सब दौलतमन्द थे ।

एक समय श्रमण भगवान श्री महावीर दूतिपलाश उद्यानमें पधारे । उव्वाई सूत्रमें जैसे कुरणीक राजा वन्दना करनेको चला था वैसे ही इस वक्त जितशत्रु राजा वन्दना करनेको चला । आनन्द गाथापतिने सुना कि भगवानको वन्दना करनेका महा फल है इस लिये मैं भी जाउं । ऐसा संकल्प होते ही स्नान कर कीमती परन्तु वजनमें हलके ऐसे वस्त्राभूषण पहन घरसे बाहर निकला । सकोरंट नामके वृक्षके फूलोंकी माला पहन छत्र माथे धार कर बहुतसे मनुष्योंके समुदायके साथ वाणिज्य ग्रामके बीचोंबीच हो दुतिपलाश उद्यानमें जहां भगवान महावीर बिराजेथे वहां आया । दहनी ओरसे तीन प्रदक्षिणा की । वन्दना कर बैठ गया । श्री महावीर स्वामीने आनन्द गाथापति और परिषद्को *धर्मकथा कही । उसे सून परिषद् व राजा पीछे लौटे । आनन्द गाथापतिने उसे सुन विचारा, हियेमें रक्खा । हर्ष–संतोष पाया । और भगवान महावीरसे सविनय कहने लगा : हे भगवन् ! यह सिद्धान्त वचन सच्चा और सन्देह रहित है इस लिये मुझे रुचा है । हे देव-

---

* 'सन्निवेश' :— शहरके पासका मैदान जहां मनुष्य खेल कूदके लिये जाते हों.

* धर्म दो तरहका है:—आगार धर्म १ व अणगार धर्म २. अर्थात् १ ला गृहस्थका–श्रावकका व २ रा साधुका–त्यागीका.

ताके वल्लभ! जिन राईसर (राजा युवराज), तलवर (तलाटी), माडंविक (लग्न करनेवाले), कोडंविक (कुटुम्बी), सेठ, सेनापति, सार्थवाह आदिने गृहस्थपन छोडकर आपके पास साधुपन स्वीकार किया हो उन्हें धन्य है। परन्तु मेरी ऐसी सामर्थ्य नहीं है कि ऐसा कर सकूं। इस लिये गृहस्थीमें रहकर आपके पास पांच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत यों श्रावक धर्मरूप बारह× व्रतको ग्रहण करुंगा। भगवानने कहा: हे देवताके वल्लभ! जैसे सुख उत्पन्न हो वैसे करो. परन्तु धर्मके काममें विलम्ब न करो। फिर आनन्द गाथापतिने नीचे लिखे मुआफिक श्री महावीरके पास बारह व्रत अंगीकार किये।

## पहिला व्रत.

यावज्जीवन दो करण और तीन योगसे स्थूल[1] और त्रस[2] जीवकी हिंसा करनेका (प्रत्याख्यान) पच्चखाण (अर्थात् बंदी.)

## दूसरा व्रत.

यावज्जीवन दो करण और तीन योगसे[3] स्थूल झूंठ बोलनेके पच्चखाण.

---

× ५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत = १२ व्रत.

१. बडेबडे. २ चलते फिरते—हलते डुलते जीव. ३. योग तीन है. मनोयोग, वचनयोग व काययोग. तीन योगसे किसी पापको त्यागनाका अर्थ यह है कि मन, वचन, कायसे न करना। करना, कराना, और करनेवालेको अच्छा जानना इसे 'त्रिकरण' कहते हैं। 'त्रिकरण' से पापकी बंदी की इसका अर्थ है कि ऐसी प्रतिज्ञा की गई कि न पाप किया न पाप करनेवालेको अच्छा जाना न पाप कराया. मन, वचन, कायसे पाप न करनेका नियमको 'तिन कोटि' से नियम किया कहा जाता है। इन तीनों योगोंसे पाप न करानेको दूसरी 'तीन कोटि' नियम कहते हैं (यों छह कोटि हुई) तीनों योगोंसे पाप करते हुएको अच्छा न जानना तीसरी तीन कोटि कहाती है (यों नव कोटि हुई)

## तीसरा व्रत.

यावज्जीवन दो करण और तीन योगसे अदत्त दान लेनेके (विना दी हुई चीज लेनेके, चोरी करनेके) पच्चखाण।

## चौथा व्रत.

अपनी स्त्रीसे संतुष्ट रहनेकी मर्यादा करे सो। एक शिवनन्दा भार्याको छोडकर दूसरी स्त्रियोंसे मैथुन करनेके पच्चखाण।

## पांचवा व्रत.

परिग्रहका परिमाण करे (१) घडा हुआ और वे घडा हुआ उसका परिमाण:—चार सुवर्ण कोटि जमीनमें गडा हुआ, चार सुवर्ण कोटि व्याजपर दिया हुआ और चार हिरण कोटिकी घरकी सजावट। बाकी सब सोने चांदीकी विधियोंके पच्चखाण. (२) चौपाये जानवरोंका परिमाण:—दस हजार गायोंका १ व्रज (गोकुल) ऐसे ४ व्रजोंको छोडकर बाकीके पशुओंका पच्चखाण. (३) खेतवथ्थु यानी खुली और ढंकी जमीनका परिमाण—पांचसो हलसे ज्यादा जमीनका पच्चखाण (१०० निवर्तनका एक हल या ढाई कोस और पांचसो हलके १२५० कोस हुए)* (४) गाडी और बैलका परिमाण—लकडी, घास, और अन्नादि लानेके लिये ५०० गाडे बहुत;

*संवत् १८४५ की लिखी हुई प्रतिके टब्बेमें लिखा है—णियत्तगे—निवर्तन. मगध देश प्रसिद्ध भूमिकाका परिमाण विशेष १०० णियत्तणका १ हल ऐसे पांचसो हलका एक क्षेत्रवथ्थु (दूसरा अर्थ) दस हाथका एक बांस, बीस बांसका एक नियतन, १०० नियतनका एक हल ऐसे पांचसो हलकी जमीनका परिमाण (इस कोष्टकके मुआफिक एक हलके २०००० हाथ हुए और ८००० हाथका एक कोस इस हिसाबसे एक हलके २॥ कोस हुए और ५०० हलके १२५० कोस)।

बाकीका पच्चखाण. (५) समुद्रमें जहाज चले उसका परिमाण –देशान्तर जानेके लिये वडे जहाजके साथ ४ छोटी नावोंके सिवायके पच्चखाण। एक करण और तीन योगसे यानी मन, वचन, कायसे पांचवें व्रतके पच्चखाण।

## छट्ठा व्रत.

इस व्रतमें चारों दिशाओंके कोसोंका परिमाण किया जाता है। पांचवे व्रतमें खेतवथ्थुका परिमाण किया है, उसीसे समझ पडता है, सूत्र पाठमें इसका कुछ खुलासा नहीं किया।

## सातवां व्रत.

रोज भोगमें आनेवाली चीजोंका परिमाण–मर्यादाः–(१) उलणियाविहं–गंध साडी यानी लाल साडी एक बाकीके शरीर पोंछनेके कपडोंका पच्चखाण. (२) दंतणविहं–जेठी मधकी लकडीके दातुनको छोड कर बाकीके वृक्षोंकी लकडीके पच्चखाण. (३) फळविहं–गुठली रहित खीरकी तरह मीठे ऐसे खीर आंबलोंको छोडकर और और फलोंके पच्चखाण. (४) अभंगणविहं–शतपाक और सहस्रपाक तेलको छोडकर और और तेलके शरीरमें मलनेके पच्चखाण. (५) उव-ट्टणविहं–गेंहूके आटेसे मिला हुआ सुगंधित उबटनको छोड कर बाकीके उबटनके पच्चखाण. (६) मझणविहं—आठ वडे वडे पानीके घडोंको छोडकर निजके काममें आनेवाले पानीके पच्चखाण. (७) वत्थविहं—रुई के दो कपडोंके सि-वाय बाकीके वस्त्रके पच्चखाण. (८) विलेवणविहं–अगर, केशर, चंदनादिको छोड कर लेपके पच्चखाण. (९) पुप्फ-विहं–सफेद कमल, जाई, मालती आदिके फूलोंकी मालाके

सिवाय सब फूलोंके पच्चखाण. ( १० ) आभरणविहं–कानके एक बडे कुंडल और हाथकी वींटीके सिवाय जेवरके पच्चखाण. (११) धुपविहं–अगर, तुरुक, धूप वृक्षकी छाल और शिलाजीत वगैराको छोड कर धूपके पच्चखाण. (१२) पेज्ञविहं–मूंग और चावलकी रावको छोड कर पेय वस्तुके पच्चखाण. (१३) भक्खणविहं–खांड भरे हुए घेवर और खांजेंको छोड कर पकवानके पच्चखाण. (१४) उदणविह –कलमशालि ( एक प्रकारका धान्य ) को छोड कर लासा धानके पच्चखाण. (१५) सूपविहं–मूंग और उडदकी दालको छोड कर दालके पच्चखाण. (१६) घृतविहं–शरदऋतुमें इकट्ठे किये हुए गायके घीको छोड कर घीके पच्चखाण.(१७) साकविहं–चवलेकी फली, अमृतफली, पैंच्या, रायटोडी, मंडकीको छोड लीलोत्तरीके पच्चखाण. (१८) माहुरविहं–मधुर सालण और मधुर पालकको छोड कर और माहुरके पच्चखाण. ( १९ ) जमणविहं–घोलण आदि, मूंग आदि दालके वडों व पुडोंको छोड कर बाकी के पच्चखाण. ( २० ) पाणीविहं–आकाशसे पडे हुए पानीको छोड कर बाकीके पच्चखाण. (२१) मुखवासविहं–इलायची, लौंग, कपूर, कंकोल और जायफल इन पांच सुगन्ध सहित पान ( काथा चूना मिला हुआ ) को छोड कर बाकीके पच्चखाण. *

## आठवां व्रत.

धर्म, अर्थ और काम इन तीनोंमेंसे एक भी काम न हो तो भी जो दंड मिले उसे अनर्थ दंड कहते हैं। वह चार

---

* छव्वीस बोलकी धारणा कही जाती है। उनमेंसे २१ सूत्रमें मिलती हैं। पांच नहीं मिलती। सो पांच प्रतिक्रमणकी पुस्तकें देख लेना चाहिए. (२२) वाहनविहं. (२३) वाहनिविहं. (२४) सयणविहं. (२५) सचितविहं. (२६) द्रव्यविहं.

तरहका है. (१) आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान धरनेसे, याने मनमें उद्वेग करनेसे और दूसरेका बूरा चींतनेसे. (२) विकथासे और तेल, घी आदिके वर्तनोंको खुले रखनेसे (३) हिंसा हो सके ऐसे शस्त्रोंके इकट्ठा करनेसे या देनेसे. (४) पापोपदेश करनेसे। इन चारों प्रकारके अनर्थदंडके पच्चखाण.

नववां व्रत—सामायिक व्रत। दसवां व्रत--दिशावगासिक व्रत। ग्यारवां पोषध व्रत। बारवां अतिथि संविभाग व्रत.

(इन चारों व्रतोंके अंगीकार करनेकी विधि सूत्रमें नहीं लिखी परन्तु नीचे अतिचारकी आलोचन विधिमें उनके अतिचार लिखे हैं उसपरसे समझमें आ जाता है.)

अब भगवान महावीर आनंद श्रावकसे उन अतिचारोंका वर्णन करने लगे, जिन्हे श्रावकको जान लेना चाहिए.

सम्यक्त्वके अतिचारः--१. जिनवाणीमें सन्देह करना. (२) अन्यमतकी इच्छा करना. (३) धर्म कर्मके फलमें सन्देह करना. (४) पाखंडी मतकी प्रशंसा करना. (५) पाखंडी मतका परिचय होना.

अब बारह व्रतके अतिचारोंका वर्णन करते हैं।

(१) प्रथम व्रतके अतिचार--(१) किसी त्रस जीवको बांध दिया हो. (२) लकडीसे मारा हो. (३) अंगोपांग छेदे हो. (४) शक्तिसे ज्यादा बोझ रख दिया हो. (५) खाने पीनेमें बाधा दी हो.

(२) दूसरे व्रतके अतिचारः--(१) किसीको भय हो ऐसा वचन कहना. (२) किसीकी छिपी हुई बातको प्रकट करना. (३) अपनी स्त्रीके मर्म औरोंको प्रकट करना. (४) किसीको झूंटा उपदेश करना. (५) खोटे खत पत्र तैयार करना।

( ३ ) तीसरे व्रतके अतिचारः—(१) चोरीकी चीजको लेना. (२) चोरको सहायता देना. (३) राजकी जकातकी चोरी करना. (४) खोटे तोलके बाट रखना. (५) बुरी वस्तुको अच्छी कह कर दे देना या मिलावट करके वेचना.

(४) चौथे व्रतके अतिचारः-(१) छोटी उम्रकी अपनी स्त्रीसे विषय करना. ( २ ) विना परणी स्त्रीसे गमन करना. (३) किसी भी तरहकी कामक्रीडा करना. (४) औरोंकी शादी करा देना. (५) काम भोगमें तीव्र इच्छा रखना.

(५) पांचवे व्रतके अतिचारः-(१) खुली या ढंकी हुई जमीनकी मर्यादाको छोडना. (२) मर्यादाके वाहर सोना चांदी रखना. (३) मर्यादा वाहर धान्य या नक्दी रखना. (४) मर्यादा वाहर दो पगे या चौपगे जानवरोंको रखना. (५) घरके सजानेकी चीजोंको मर्यादा वाहर रखना.

(६) छठे व्रतके अतिचारः—(१) उंची दिशाकी मर्यादाको उल्लंघन करना. ( २ ) नीची दिशाकी मर्यादाको उल्लंघन करना. (३) विचली दिशाकी मर्यादाको छोडना. (४) एक दिशाको कम कर दूसरी दिशाको वढाना. (५) संदेह आजानेपर भी आगे वढ जाना।

(७) सातवें व्रतके अतिचारः-(१) मर्यादासे वाहर सचेत वस्तुका खाना. (२) सचेत वस्तुसे मिली हुइ वस्तुका खाना. (३) अध पकी वस्तुका खाना. (४) भुडता वगैरा खाना. (५) ऐसी वस्तु खाना जिसमें खावे कम और डालदे वहुत. अब १५ कर्मके आनेके स्थानोंको कहते है जो इस व्रतमें श्रावकको जान लेने चाहिए परन्तु आदरने नहीं चाहिएः-(१) आग जलानेका

व्यापार. (२) जंगल कटानेका व्यापार. (३) गाडी आदि वेचनेका व्यापार. (४) गाडी वैल रखकर भाडा करनेका व्यापार. (५) पृथ्वीको खुदानेका व्यापार. (६) हाथीदांत वगैराका व्यापार. (७) जानवरोंके वालोंका व्यापार. (८) मदिरादिकका व्यापार. (९) लाख आदि रंगनेकी वस्तुओंका व्यापार. (१०) जहरीली वस्तुओंका व्यापार. (११) घाणी आदिका व्यापार. (१२) वैलोंके अंग छेदनेका व्यापार. (१३) जंगलमें आग लगानेका व्यापार. (१४) सरोवर कुए ताल्लाव आदिको सुखानेका व्यापार. (१५) और हिंसक जीवोंको पालने व वेचनेका व्यापार।

(८) आठवें व्रतके अतिचारः-(१) काम वढे ऐसी वातें करना. (२) कुचेष्टा करना. (३) मुंह साम्हने मीठा वोलना और पीछेसे वुराई करना. (४) अधिकरणका संयोग वना लेना. (५) एक वार भोगनेकी वस्तुको वार वार भोगना.

(९) नववें व्रतके अतिचारः-(१) मनको वुरे रास्ते जाने देना. (२) वचन वुरे कहना. (३) कायका वुरा उपयोग करना. (४) सामायिक करलेने पर भी उसकी याद न रखना. (५) सामायिकका समय पूरा न होने पर भी उसे पूरा कर देना.

(१०) दसवें व्रतके अतिचारः-(१) हदकी मर्यादासे वाहरकी वस्तु मंगवाना. (२) मर्यादासे वाहर चाकरके साथ वस्तु मंगवाना या भेजना. (३) हद वाहरसे किसीको चिल्हा कर वुलाना. (४) अपना स्वरूप वता समझा कर किसीको वुलाना. (५) मर्यादासे वाहर कंकर फेंक कर किसीको वुलाना.

(११) ग्यारहवें व्रतके अतिचारः-(१) पाट और बिछौनेको अच्छी तरह न देखना या देखना ही नहीं. (२) पाट और बिछौनेको अच्छी तरह न पूंजना या पूंजना ही नहीं. (३) लघुशंका या दीर्घशंकाकी जगहको अच्छी तरह न तलाश की हो या तलाश की ही न हो. (४) उसी जगहको अच्छी तरह साफ़ न की हो या की ही न हो. (५) पोषधमें प्रमाद किया हो या क्रिया ही न की हो.

(१२) बारहवें व्रतके अतिचारः-(१) सचेत वस्तु रख कर बोहराना. (२) अचेत वस्तुसे ढंक कर सचेत वस्तु बोहराना. (३) बासी वस्तु या बिगडी हुई वस्तु बोहराना. (४) स्वयं सूझता होने पर भी दूसरेको बोहरानेको कहना. (५) दान देकर अहंकार करना.

अब यहांपर मरणके अंत समयमें संथारा किया जाता है उसके अतिचार बताते है. (१) इस लोकमें सुख पानेकी इच्छा करना. (२) परलोकमें देवता होनेकी इच्छा करना. (३) जीनेकी इच्छा करना. (४) अशाता होनेसे मरनेकी इच्छा करना. (५) मनुष्य और देवताके कामभोगकी इच्छा करना. इस तरह आनन्द गाथापति श्रमण भगवान महावीरके पास बारह व्रत अंगीकार कर उन्हें वन्दना नमस्कार कर कहने लगे "हे भगवन्! आजसे मुझे अन्यतीर्थीके तपस्वी तथा मिथ्यात्वी देवतों और साधुपनको न पालें ऐसे अरिहंतके साधुओंको वन्दना नमस्कार करना नहीं कल्पे, मैं उनकी न सेवाभक्ति करुंगा न उनके पास ही जाउंगा। पहले न बोलूंगा न बोलाउंगा। बिना बोलाया न बोलूंगा। एकबार न बोलाऊंगा न बारबार बोलाऊंगा। उन्हें अन्न पाणी, मेवा, मुखवास, न

दूंगा न दिलवाऊंगा। इसमें इतनां आगार ( छूट ) कि:-( १ ) राजाके हुकमसे. (२) समाजके हुकमसे. (३) किसी बलवान-के परवश हो. (४) देवताके परवश हो. ( ५ ) मावाप या गुरुके उपसर्गकी जगह. ( ६ ) जंगलमें या अकालमें, इन २ बातोंको करना पडे तो सम्यक्त्व जावे नहीं। और साधुको वन्दना नमस्कार करना, उनकी सेवा भक्ति करना, प्राशुक निर्दोष आहार पाणी, मेवा, मुखवास, वस्त्र, पात्र, कंबल, पाट, पाटे, स्थानक, संथारो, औषध देना मुझे क़ल्पे। इस तरह व्रत अंगीकार कर तीनवार महावीर स्वामीको नमस्कार कर आनन्द दुतीपलास वनसे वाणिज्य गाम नगरमें अपने घर गया। वहांपर सब बातें अपनी शिवनन्दा भार्यासे कही और कहा " हे देवानुप्रिये ! तुम्ह भी श्रमण भगवान महावीरके पास जाओ और वन्दना कर श्राविका धर्म अंगीकार करो. "

यह सुनकर शिवनन्दाको हर्ष संतोष हुआ। वह कुटुम्ब-के मनुष्योंको और सेवकोंको साथ लेकर जल्दी चलनेवाले लघुकरण रथमें बैठकर भगवान महावीरको वन्दना करनेको निकली। भगवान महावीरने बडी परिषदमें शिवनन्दाको धर्म कथा सुनाई, उसे सुनकर आनन्द गाथापतिकी भांति शिव-नन्दाने भी बारह व्रत रुपी श्राविका धर्म अंगिकार किया। फिर जिधर होकर आईथी उधर होकर ही घर गई।

एक समय गौतम स्वामी भगवान महावीर स्वामीको पूछने लगे: " हे भगवन् ! आनन्द गाथापति आपके पास दिक्षा ग्रहण करेगा ? " भगवान बोले: " हे गौत्तम ! वह दीक्षा लेनेको समर्थ नहीं है. "

आनन्द गाथापति श्रावक हुआ और शिवनन्दा भार्या श्राविका। वे दोनों जीव अजीव और नो तत्त्वके ज्ञानी हो साधु-साध्वीको दान देते हुए पोषध, उपवास, आयंबील आदि तप करते हुए विचरते हैं। इस तरह चौदह वर्ष हो गये। पन्दरहवें वर्ष एक समय आधीरातमें धर्म जागरिका जगते हुए आनन्द गाथापतिको अध्यवसाय उत्पन्न हुआ। उसने सब सेठ, सेनापति, मित्र जाति समुदायको बुला जिम्हा कर बडे पुत्रको घरका भार समर्पण किया। फिर उससे पूछ कोल्लाग सन्नि-वेशमें पोषधशाला और लघुशंका और दीर्घशंकाकी भूमिको पडीलेह, पोषधशालामें डाभका संथारा बनाया। उस पर बैठ कर पोषध किया। और डाभके संथारेमें बैठ कर श्रावककी ग्यारह * प्रतिमा रुप धर्मको अंगिकार किया। १ ली प्रतिमा १ मासकी, २ री दोकी, यों ११ वीं ग्यारह मासकी आराधन करते हुए विचरने लगे।

दुष्कर तप करते २ आनन्दजीका शरीर दुबला होकर सूख गया। एक समय आधीरातमें धर्म जागरिका जगते २ उसे ऐसा अध्यवसाय उपजा "मेरे शरीरमें वीर्य, बल, पराक्रम कम हो गया है। यदि मेरे धर्माचार्य श्री महावीर स्वामी पधारें तो उनके पास प्रातःकालमें संलेहणा कर चार प्रकारके आहारका त्याग करुं" ऐसी निर्मळ लेश्याको ध्याते हुए ज्ञानावरणीय

*(१) प्रतिमा १ मासकी जिसमें शुद्ध सम्यक्त्व पाला जावे. (२) दो मासकी अच्छे व्रतोंका पालना. (३) तीन महीनेकी सामायिक. (४) पोषध प्रतिमा. (५) काउस्सग. (६) ब्रह्मचर्य. (७) सचित आहार त्याग. (८) आरंभ वर्जन. (९) नृत्य प्रेक्षावर्जन. (१०) उद्दिष्ट आहार त्याग. (११) माथा मुंडाकर रजोहरण लेकर यति जैसा होकर फिरे। सब मिल कर पांच वर्ष छह मासमें पूरी होती है.

कर्मोंका पडदा हट गया और निर्मल अवधिज्ञान उत्पन्न हुआ। पूर्व दिशामें लवण समुद्रमें ५०० धनुष्य क्षेत्र देख पडने लगा। दक्षिण पश्चिम की भी यही दशा हुई। उत्तरमें भी चूल हेमवंत और वर्षधर पर्वत तक दिखने लगे। ऊपर सुधर्म देवलोक तक देख पडने लगा और नीचे रत्नप्रभा नरक तक कि जहां चोरासी हजार वर्षकी स्थिति है।

बाद श्रमण भगवान महावीर स्वामी पधारे। इनके प्रथम शिष्य इंद्रभूति ( गौतम ) नामक गणधर थे। वह सात हाथ ऊंचे थे। बडे तपस्वी थे। सम चोरस नाम संठाण और वज्र-ऋषभनाराच नाम संघयणके धनी थे। सोनेकी तरह उनका शरीर शोभायमान था। कमल कासा गौर वर्ण था। शरीर परसे उन्होनें राग छोड दिया था। तेजस् लेश्याको छिपा दिया था। क्रोध, अहंकार, माया और लोभको जीत लिया था। जाति कुलसे शुद्ध थे। छठ छठके पारणे करते हुए विचरते थे। उन्होंने एक दिन छट्ठके पारणेके दिन पहले पहरमें सज्झाय, दूसरे पहरमें ध्यान किया और वह तीसरे पहरमें भगवान महावीरसे आज्ञा लेकर दुतीपलाश उद्यानमेंसे निकल कर वाणिज्य गांवमें गोचरीको गये। वहां ऊंच नीच घरमें अटण करते हुए भिक्षा ले पीछे लौटते हुए कोल्लाग सन्निवेशके पास होकर निकले। वहांपर बहुतसे मनुष्योंका कोलाहल सुना कि आनन्द गाथापतिने इस पोषधशालामें संलेहणा की है। आनन्द गाथापति जहां सोया हुआ था गौतम गये। गौतमको आते हुए देख कर आनन्द गाथापतिने वन्दना नमस्कार किया और कहा कि " पूज्य ! गृहस्थीमें रहते हुए किसी श्रावकको अवधिज्ञान उत्पन्न हो सकता है या क्या ? "

गौतमने कहाः " हां, श्रावक ! हो सकता है " । आनन्दने कहाः " सो मुझे हुआ है । पूर्व दिशामें लवण समुद्रमें ५०० योजन देखता हूं और नीचे लोलुचुय नरकवास देखता हूं " गौतमने कहाः " इतना ज्यादा अवधिज्ञान नहीं उत्पन्न हो सकता इस लिये 'मिच्छामी दुक्कडं' लो यहां ही " । आनन्द बोलाः " पूज्य ! सच्ची वातका 'आलोयण' नहीं होता इस लिये आप ही 'मिछामी दुक्कडं' लो । " फिर गौतमको शंका हुई । वहांसे जल्दी श्रमण भगवान महावीरके पास आये। भात पानी दिखाया, नमस्कार कर पूछने लगेः " प्रभो ! मैं आलोवूं या आनन्द श्रावक आलोवे ? भगवानने कहाः " गौतम ! आनन्दका कहना सही है इस लिये तुम्ह वहीं जा कर आलोवो और प्रायश्चित लेकर आनन्द श्रावकको खमाओ" श्री महावीर स्वामीके वचनको तहत कह कर गौतम स्वामी आनन्दके पास आये, उन्हें खमाया और 'आलोयण' लिया ।

आनन्दने वीस वर्ष तक श्रावकपन पाला । श्रावककी ११ प्रतिमा की । मरणके वक्त १ मासकी संलेहणा की । अपनी आत्माको निर्मल की । ६० टंक भात पानीका अणसण छेद, । आलोया, पडिक्कमा, समाधि संतोष पाया । कालके समय काल कर सुधर्म देवलोकमें सुधर्मवतंस वडे विमानसे उत्तर पूर्व बीचमें इशान कौनके अन्दर अरुणाभ विमानमें चार पल्योपमकी स्थितिसे देवता उत्पन्न होगा ।

गौतमने कहाः " हे भगवन् ! वहांसे आयुष्य पूर्ण कर आनन्द श्रावक कहां जावेगा ? " भगवानने कहाः " महाविदेह क्षेत्रमें* हो दृढपइन्नाकी तरह कर्म खपा मोक्ष पावेगा. "

## सार.

श्रावकके १२ व्रत समझानेके लिये यह अध्ययन लिखा

* From Theosophic point of view the word

हुआ है. १२ क्रोड सुवर्णका मालक आनंद गाथापति जैसा धनाढ्य भी व्रत अंगीकार कर सका, इससे मालूम होता है कि व्रत अंगीकार करनेमें लक्ष्मी कोइ बाधा नहीं करती है.

आनंद श्रावक प्रथम तो जैन धर्मसे अज्ञ था, मगर श्री महावीर प्रभुके दर्शन होनेके पहले, पूर्व भवोंमें अनेक प्रकारके अनुभवोंसे वह आत्मा रुपी क्षेत्र सुधरता सुधरता 'संस्कारी' तो अवश्य हुआ था; मतलब कि वो 'मार्गानुसारी' तो हुआ ही था. पिछे भगवान के सदुपदेशसे 'श्रावक' हुआ, व्रत अंगीकार किये, पिछे ११ पडिमा आदरी, और अखीरमें देह और आत्माका भेद बराबर अनुभवमें आनेसे संथारा कर दिया. इस तरह क्रमशः उनकी आत्मा उन्नतिक्रमकी सीढी पर चढती २ परमपदको प्राप्त हुई.

'व्रत' ये कुछ खाली शब्द नहीं है; हमेश के छोट–बडे तमाम कार्योंमें आचारशुद्धि और विचारशुद्धिका पालन हो ऐसा निश्चय करना उसीका नाम 'व्रत' है. व्रतधारी श्रावकका दररोजका जीवन शुद्ध होता है, उनका प्रत्येक कार्य–शब्द–विचारमें दया और यत्नाका समावेश होता है, उनका लक्ष बिंदु परम पद ही है. इस लिये 'व्रत' पालन करनेके लिये दररोज फजरमें करने योग्य भावना निचे दी गई है.

मैं निश्चय करता हूं किः—

---

क्षेत्र may mean 'Plane' and महाविदेह क्षेत्र, accordingly, should not be understood as land, but as a particular plane-condition of life-higher life where in stead of the physical body the finer bodies are working for the evolution of the soul.

(१) आज मैं किसी प्राणीको इरादापूर्वक इजा करुंगा नहीं और अयत्ना यांने दुर्लक्षसे या प्रमादसे किसी प्राणीको हानी न पहुंचे इस बातकी दरकार करुंगा.

( २ ) आज मैं किसीको कोइ तरहका नुकसान हो ऐसा झूठ वचन नहीं बोलूंगा. हास्य, परनिंदा, गपसप आदि वाचाके दुरुपयोगके कार्योंसे मैं दूर रहनेकी दरकार करुंगा.

(३) आज मैं किसीकी चोरी नहीं करुंगा, फोकटके धनकी इच्छा नहीं करुंगा, व्यापारादिमें ठगाइ नहीं करुंगा.

(४) आज मैं विषयवृत्तिको अंकुशमें रखूंगा. धर्मपत्नी सिवाय और सब स्त्रीयोंसे भगिनी भाव रखूंगा. धर्म पत्नीको भी विषय वासना तृप्त करनेका ही पदार्थ न समझते हुवे बुद्धिपुरस: वासनाका दमन करुंगा. मेरे मनको विषय संबंधी विचारोंसे: आंखोंको विषयजनक पदार्थोंसे, जीव्हाको अश्लील शब्दोच्चारसे दूर ही रखूंगा.

(५) आज मैं परिग्रहमें लुब्ध होनेके स्वभावको अंकुशमें रखूंगा. स्थावर व जंगम जो परिग्रह मेरी पास है उससे ज्यादा जो कुछ प्राप्ति मुझे आजके दीनमें हो, उसमेंसे रु.– कीमतका रख कर दूसरा सब दुःखी जीवोंको गुप्त स्हायता पहुंचानेमें और ज्ञानकी भक्ति करनेमें व्यय करुंगा.

(६) आजके दीनमें, जहां तक हो,– माइलसे ज्यादा, परमार्थके कार्य सिवाय, भ्रमण नहीं करुंगा.

(७) आजके दीनमें, उपभोग–परिभोगके पदार्थों ज्युं बनेगा त्युं थोडेसे ही नीभावूंगा. वस्त्रादि 'परिभोग' की चीजें और खानपानादि 'उपभोग' की चीजें ये दोनोकी

खास आवश्यकता जितनी होगी उससे ज्यादा (शोखके लिये ) काममें नहीं लूंगा. ज्यूं ज्यूं आवश्यकता ज्यादा चीजें-की होती है त्यूं त्यूं आत्मा पर बोजा बढता है और खूदका विचार करनेकी फुरसद कम रहती है, ऐसा समझ कर खानेकी पीनेकी—पोशाककी-मर्दनकी—बीछानेकी इत्यादि हरएक प्रकारकी चीजें ज्युं बनेगी त्युं थोडीसे ही चला लूंगा. मैं सादा, आत्मसंयमी और मिताहारी बनूंगा.

(८) मुझसे बनेगा वहां तक मन, वचन और कायाको व्यर्थ व्यापारमें न फँसाउंगा। इधर उधरकी खटपट, गप्प, चिंता और कुतर्कमें अपने आत्मतत्त्वको नाश न होने दूंगा। भोग विलासकी चीजोंपर मूर्छित न बनूंगा। और न किसीका बुरा चिंतूंगा। आत्मक्लेश न होने दूंगा।

(९) मुझसे बनेगा वहांतक चित्तका समतोलपन रक्खुंगा। तमाम दिन चित्तका समतोलपन न भी रह सकेगा तो भी कमसे कम ४८ मिनिट तो उसके अभ्यासके लिये अवश्य निकालूंगा। इस समयमें 'सामायिक व्रत' पालूंगा। मन, वचन और कायाके योगसे पाप कर्म न करुंगा, न करा-उंगा तथा न करतेको भला समझूंगा। इन नव 'कोटी' मेंसे मुझसे जीतने पल सकेंगे उतने तो अवश्य पालूंगा ही।

(१०) जहां तक मुझसे हो सकेगा (      ) इतने माइलसे दूरकी वस्तु मेरे भुक्तनेके लिये नहीं मंगवा-उंगा। अथवा आई हुई वस्तुको उपयोगमें न लूंगा। (यह व्रत स्वदेशभक्तिका है; भारतके बाहरसे कोई वस्तु मंगाउंगा नहीं या मंगवाइ होगी तो उपयोगमें न लाउंगा ऐसा नियम कर-नेसे यह व्रत भली प्रकार पाला कहा जायगा)।

(११) जहांतक हो सकूंगा मैं यत्न और अप्रमादसे अपने आत्माका पालन करुंगा। वर्षमें (      ) दिन पौषध-व्रत करुंगा कि जिसमें २४ घंटे निर्दोष जीवन व्यतीत करना पडता है और अपनी उन्नति संबंधी विचार करनेका अवकाश मिलता है।

(१२) जहां तक बनेगा मैं पात्र और सुपात्रको दान दूंगा और अपने भोगान्तरायी कर्मोंका नाश करुंगा। दीन दुःखीयोंको दान, उपदेशकोंको दान, त्यागी महात्माको दान इस प्रकार सुपात्रको दान करनेका मौका ढूंढता रहूंगा और मौका मिलतेही बडे आनंदसे दान दूंगा।

इन बारह नियमोंकी सूचना देनेके बाद अब हम आनन्दजीकी कथामेंसेनिकलते हुए दूसरे मुद्दे पर विचार करेंगे। आनन्दजी जैसे 'पति' आजके समयमें थोडेही होते हैं। अपने आधे अंगको अर्थात् अपनी धर्मपत्नीको उन्होंने श्राविका धर्म समझाकर अंगीकार करवायाः मतलब यह है कि उन्होंने अपनी स्त्रीको इन्द्रिय सुखोंके लिये दासी न समझकर मित्र या सखी गिनी और वास्ते उसके हितके चिंता करी। मनुष्य का धर्म है कि वह अपनी स्त्रीको धर्मज्ञान दें। और वास्ते उसके आत्महितके हो सके उतनी सुगमता कर दें।

आश्चर्यकी बात है कि ऐसे द्रढ श्रावक जो जीव और अजीवादि नवतत्त्व इत्यादिके ज्ञाता थे और ग्यारह प्रतिमा और संथारा तककी हिम्मत करनेवाले थे, उन्हें भी श्री सर्वज्ञ भगवानने दीक्षा लेनेको असमर्थ ठहराये थे। अरेरे! हमारे मुनिवर अपने महावीर पिताके इन वचनोंका मर्म कब समझेंगे? दीक्षा कुछ छोटीसी बात नहीं है। बिना आध्यात्मिक जीवनके प्रव्रज्या अर्थात् दीक्षा कभी दृढतापूर्वक नहीं पल सकती।

भगवानके नियमको तो देखिये कि उस दादाने मुख्य शिष्य गैातमको भी फरमाया कि " तू जा, अभी जा और आनन्द श्रावकसे क्षमा मांग " । एक श्रावकसे बडाभारी महात्मा क्षमा मांगे ! कैसा निष्पक्षपाती न्याय है ! वर्तमान समयके मेरे श्रावक भाई अपने गुरुकी हठ व आचारभ्रष्टता देखतेही गैात्तमजीका दृष्टांत देकर क्षमा मांगनेकी फरज पाडे तो कैसी भली वात हो !

देखिये ! कैसे आश्चर्यकी वात है कि भगवानके मुख्य साधुको जो ज्ञान वर्षोंकी दीक्षा होनेपर भी ( उस समयतक ) नहीं उत्पन्न हुआ वही अवधिज्ञान गृहस्थ आनन्दजीको उत्पन्न हुआ! आजके साधु 'चाहे जैसे उत्तमश्रावक याने भावसाधुसें हम उत्तम हैं ' इस प्रकारका दावा करते हैं, वे इस रहस्यको अपने हृदयमें विचारें तो उनका खूव भला-कल्याण होगा ।

श्री आनन्दजीका चरित्र एक सत्यपर और प्रकाश डालता है । उन्होंने नियम लिया था कि, " साधुपनेको नहीं निभाते ऐसे अरिहंतके साधुको भी मैं नमन नहीं करुंगा । उनकी सेवा भक्ति न करुंगा ! साधु जानकर अन्न-जल--वस्त्र नहीं दूंगा" इन नियमोंको धारण करनेवाला सख्स भगवानका पक्का श्रावक है । उनके हालको लिखनेवाले शास्त्रकार वास्तवमें माननीय महात्मा हैं । इस प्रकार जिनकी श्रद्धा हो उन सब जैनी भाइयोंसे वीतराग प्रभुके नामपर मैं पूछता हूं कि, जीन २ साधुओंको आप वन्दना करते हैं उन सबकी योग्यताका-गुणोंका आपने कभी विचार किया है ? क्या सब सच्चे साधु हैं ? यदि शास्त्रकारकी इस वात पर ध्यान दिया जावेतो जैनधर्मके निर्मल झरेमें कचरा भी आ मिला है वे अपने आप दूर हो जावे।

# अध्ययन २ रा–सुश्रावक कामदेव.
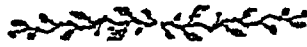
उस काल उस समयमें चंपा नामकी नगरी थी । उस नगरीमें पूर्णभद्र नामका देहरा था, वहांका राजा था जीतशत्रु। इसी नगरीमें एक धनाढय गाथापति रहता था, उसका नाम था कामदेव। इसके घरमें छ कोटी सुवर्ण भूमिमें गडा हुआ था, छ करोडसे व्यापार चलता था, और छ करोडके सामानसे घर सजा रखा था। इसके सिवाय छ गोकुलका वह स्वामी था। एक एक गोकुलमें दस हजार गायें थी।

कामदेवकी धर्मपत्नीका नाम भद्रा था। वह बडी रुपवान थी और पांचों इन्द्रियोंसे सुशोभित थी।

एक समय श्री महावीर स्वामी पूर्णभद्र चैत्यमें पधारे। उन्होंको वंदना करनेको आनंदजीकी तरह कामदेव भी गये और भगवानको वंदना कर धर्मकथा श्रवण करी, आनंदजीकी तरह 'श्रावक धर्म' अंगीकार किया, घर आकर घरका कार्य-भार बडे बेटेको सुपुर्द किया।

बाहरका बोझ उतारकर भीतरका बोझ उतारनेके अभि-लाषी कामदेव श्रावक स्त्री, ज्येष्ट पुत्र और मित्रादिको पूछ कर पौपधशालामें आये। आनंदजीकी भांति पौषध करने लगे, और श्रावककी ११ प्रतिमा (पडिमा) अंगीकार की।

एक समय पौषधमें वैठे हुए कामदेवको विचलित करने के इरादेसे एक मिथ्यादृष्टि देवताने अलग २ तीन रुप धारण कर उपसर्ग किये; परन्तु इस कसौटीमें कामदेव पार उतरे और उनकी सवलता वनी रही।

प्रथम तो देवताने एक महाभयंकर पिशाचका रुप वनाया। औंधे किये हुए 'सूंडला' * जैसा उसका मस्तक था॥ डाभके अग्रभागसे तीव्र और चावलके तुशसे पीले उस पर वाल थे। पानी भरनेकी वडी मटकी के ठीवरे जैसा उसका लिलाट था। गिलेरीकी पूंछकीसी विकृत आंखके डोले थे और डरावने लगते थे। वकरेके नाककीसी उसकी नाक थी और भट्टीकेसे नकतोडे थे। घोडे की पूंछ जैसी उसकी मूंछ थी और वह पीली पीली और लंवी व डरावनी जान पडती थी। ऊंटके होठ जैसे उसके लंवे लटक रहे थे। लोहके फावडे जैसे दांत थे। लव लव करती उसकी जीभ वाहर निकल रही थी। हलके दांत जैसी ठोडी थी। घी भरनेके फूटे कुलकेसे उसके भूरे २ गाल थे। और वडे कडे थे। वडे नगरके दरवाजेके किंवाड समान उसकी छाती थी और वडी कोठी केसे उसके हाथ थे। पत्थरकी 'निसा' जैसी उसके हाथकी हथेलीयां थी और कुरांचोंकीसी हाथकी उंगलीयां, सीप केसे नख थे। जहाज के हवा भरनेके कपडे जैसे उसके स्तन थे। कोटकी वुरजकासा पेट था और परनाले कीसी नाभी। शिंकाकार लटकता हुआ गुह्यस्थान था और कचरेसे भरे हुए कोथळे जैसा उसका अंडकोष था। अर्जुनके तृण समान उसकी पींडीयां थी

* ढांकला

और बडी कोठी कीसी उसकी जांघें थी। लोहेकी एरण समान उसके पैर थे, गाडेके उंटडे समान हिलता हुआ जांघोंका ढांचा था। मुख पोला कर जीभ बाहर निकाली थी। उससे ललाट को चाट रहा था। काकीडेकी और चूओंकी माला पहन रख्खी थी। और न्यौलोंको कानोंमें लटका रक्खा था। सांपका उत्तरासन किये हुए था। ऐसा भयंकर रुप धारण किये हुए वह तालियें बजाता हुआ, गर्जना करता हुआ और हड हड हंसता हुआ, नाना प्रकारके रोमराग युक्त पंचवर्ण, एक बडी भारी नीलोत्पलसी अलसीके फूलकीसी हाथमें नंगी तरवार ले कर वहां पौषधशालामें आया, जहां कामदेव श्रावकने पौषध किया था। वहां आकर क्रोधसे सुंसाटा करता हुआ कामदेवको कहने लगाः" अरे कामदेव श्रावक! बे मौत मरनेकी इच्छा करनेवाले! बुरी पर्यायोंका धनी! बुरे लक्षणवाले! ख़राब चौदश पूनमके जन्मे हुए! लज्जा-शोभा-कीर्ति-धैर्य हीन! यदि तू पौषधको खंडित न करेगा तो मैं इस तरवारसे तेरे टुकडे टुकडे उडा दूंगा। और इससे तू खूब दुःखी होगा व आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान ध्याता हुआ अकाल मौतसे मरेगा।"

इस प्रकार दो तीन वार कहा परन्तु इससे कामदेव न डरा, न दुःखी हुआ, न विचलित हुआ, और बोला भी नहीं और अपने धर्मध्यानमें दृढ रहा।

कामदेवको विचलित हुआ न देख कर पिशाच बहुत क्रुद्ध हुआ। उसके ललाटमें तीन सल पड गये। कामदेवके शरीरके उसने टुकडे २ कर दिये*। इससे कामदेवको बडाही

* यह वर्णन धीरे धीरे मननपूर्वक पढनेका है। श्रावकजीके

असह्य परिसह–दुःख हुआ परन्तु उसे उसने शुद्ध परिणाम व समभावसे सहन किया और मनके अध्यवसायको तिलमात्र भी न डिगने दिया।

अपना प्रयोग यों खाली गया देखकर उस देवने पिशाच रूपको छोडकर हाथीका रूप धरा। वे ऐसा था:—

चारों पैर, सूंड, पूंछ और गुहृस्थान ये सातों उसके अंग जमीनको स्पर्श करते थे। आगेसे वे उंचा था, और पीछेसे शूकरकी समान नीचा था। बकरीके समान लंबी कूख थी। गणपति कासा लंबा पेट था। मालतीके फूल कैसे सफेद दांत थे और उसपर सोनेकी खोली चढी हुई थी। धनुष्यकी तरह सूंढके अग्रभागको बांका कर रखा था। कछुवे कैसे उसके नख और पैर थे।

ऐसा भयंकर मदोन्मत्त हाथीका रूप धारण कर मेघ समान गर्जना करता हुआ मन व पवनके वेगसे पौषधशालामें कामदेवके पास आया और बोला:" रे कामदेव। यदि तू व्रतको न तोडेगा तो तुझे सूंढसे पकडकर बाहर ले जाउंगा और आकाशमें उंचा उछाल दुंगा। तथा दांतद्वारा खूब पीडा पहुंचाउंगा। भूमिपर पटक कर तीन बार पैरोंसे दलूंगा–मलूंगा। इससे तुझे बडी पीडा होगी और तू आर्तध्यान और रौद्रध्यान ध्याता हुआ अकाल मृत्यु पायगा "। परन्तु कामदेव

शरीरके टुकडे २ हो गये; तो भी उन्होंने आर्तध्यान रौद्रध्यान न ध्याया और नहीं धर्म पलटा। मिलके बॉइलरमें गाडा भर कोयले भरने पर भी बॉइलर पर 'अस्बेस्टोस' नामके पदार्थका टुकडा डाल देते हैं तो उस जाज्वल्यमान आगपर हो कर कोई भी जा सकता है। वैसे ही 'धर्मध्यान' 'एस्बेस्टोस' है। उसे स्थूल वस्तु और घटना रूपी आगपर रखनेसे मनुष्यको आधि–व्याधि–उपाधि रूपी जलन नहीं सताती। यह लाभ बडा भारी लाभ है।

डरा नहीं। उस देवने तीन बार ऐसा कहा तो भी कामदेव-जीके मनके अध्यवसाय बराबर बने रहे।

इससे वह देव क्रुद्ध हो कर लाल आंखें कर कामदेवको सूंढमें ले कर आकाशमें उछालने लगा और मूसल जैसे दांतों पर झेलने लगा। फिर भूमिपर डालकर तीन बार पैरसे रगदला। इससे कामदेवको तीव्र वेदना उत्पन्न हुई। उसको उसने समभावसे सहन करी। अपने मनके अध्यवसायोंको डिगने दिये नहीं।

यह दूसरा प्रयोग निष्फल हुआ देखकर देव पौषध शाला के बाहर गया और एक भयंकर काले सर्पका रुप धर आया! वह रुप ऐसा था:—

उसमें बडा उग्र विष और दृष्टि विष था। शरीर मोटा और काजलके समान था। आंखें काजलके ढेर सी और प्रकाशित लाल थी। लप २ करती हुई बडी चंचल दो जीभ बाहर निकलती थी। स्त्री के चोटी समान लंबा था। चक्र जैसी वांकी और बडी मूछोंवाला उसका फण था। उसे वह चाहे जैसा फैला सकता था। उसका मणी भी वैसा ही था। ऐसा महा भयंकर रुप धारण करके लुहारकी धमणकी तरह धबधबाट करता हुआ पौषधशालामें कामदेवके पास आया और कहने लगा:" अरे कामदेव! यदि तू व्रतको न तोडेगा तो मैं तेरी पीठपर होकर तेरे शरीर पर चढूंगा और गलेमें तीन आंटे लगाकर तीव्र विषसे भरी हुई दाढोंसे तेरे हृदयमें काटूंगा। इससे तुझे बडी भारी वेदना होगी। आर्त्तध्यान और रौद्रध्यानसे कुसमयमें मरेगा"। इस प्रकार उसने दो तीन बार कहा; परन्तु कामदेव किंचित् मात्रभी न डरा। इससे वह

क्रुद्ध हुआ और कामदेवकी पीठपर सर सर चढ गया। गलेमें तीन आंटियां दी। और तीक्षण तथा विप भरित दाढोंसे काम-देवके हृदयपे दंश दिया। इससे कामदेवके सारे शरीरमें वेदना हुई; तो भी वे धर्मसे चलायमान नहीं हुए। और वेदनाको शुद्ध परिणामसे सहन करीं।

इस प्रकारके भयंकर और उग्र परिसहोंसे जब कामदेव न डिगा तब वह देव निराश हो गया। उसने सर्पके रुपको त्याग दिया। और एक प्रधान देवताके रुपको धारण किया। पचरंगे वस्त्र पहरे, गलेमें हार डाल लिया, कानोंमें कुंडल सजे, मस्तकपर मुकुट धारण किया। घूंघरसे घमकार करता दसों दिशाओंको उद्योत करता हुआ आया और अन्तरीक्षमें-अधर रहकर कामदेव प्रत्ये कहने लगाः

" अहो कामदेव! धन्य है आपको! आप पुण्यवान्, कीर्तिवान् और सदाचरणी हो। हे देवताओंको प्रिय! एक दिन शक्रेन्द्रने चौरासी हजार सामानिक देव और देवियोंके परिवारमें सिंहासनारुढ हुए कहा था कि 'आजके समयमें जंबुद्वीपके भरतक्षेत्रकी चंपानगरीमें कामदेव श्रावक पौषध-शालामें पौपध करके बैठे हैं। उन्हें उन्होंके व्रतसे विचलित करनेको कोई देव, दानव, असुरकुमार, गंधर्व, राक्षस, किन्नर, किंपुरुषादि समर्थ नहीं है'। मुझे शक्रेन्द्रके इस वचनपर विश्वास न हो सका। इस लिये मैं आपको विचलित करने आया था। परन्तु शक्रेन्द्रने जैसा कहा था वैसेही आप दृढ हो यह मैंने प्रत्यक्ष देख लिया। हे देवप्रिय! मैं आपको खमाता हूँ। मेरे अपराधकी क्षमा करें। अब मैं ऐसा न करुंगा"।

यों कहकर तीनवार पैरोंमें पडकर दोनों हाथ जोडकर वार-वार वंदन कर देवता जीधर होकर आया था उधर चला गया।

कामदेव श्रावकने उपसर्ग मिटा जानकर काउसग्ग पाला। इसी अरसेमें श्रमण भगवान श्री महावीर देव चौदह हजार साधुओंके साथ उपर बतलाये हुए उद्यानमें पधारे। इस बात-को सुनतेही–मालुम होतेही कामदेवने सोचा कि, भगवानको वंदना नमस्कार करके पौषध पारना चाहिये। शुद्ध उज्वल वस्त्र पहनकर वहुतसें मनुष्योंके परिवार सहित भगवानको वंदना करनेको गया। वहां परिषदमें भगवानने धर्मकथा कही। फिर कामदेवको कहा: "अहो कामदेव श्रावक! आज आधी रातमें देवताने पिशाच, हाथी और सांपका रुप धरकर तुम्हें तीन उपसर्ग दिये* और उनको तुमने सहन किया। फिर वह

---

* यहां पर एक बात विचारने जैसी है। प्रायः करके कसौटी मानसिक भवनपर होती है एसा यह एक दृश्यपरसे जाना जा सकता है। पहेले उपसर्गमें कामदेवके शरीरके अंगोपांग काटकर टुकडे किये थे, दूसरे उपसर्गमें शरीरको हाथीने रगदोला, और तीसरे उपसर्गमें भयंकरसे भयंकर विष उसके शरीरमें व्याप्त किया। यह सब यदि मानसिक सृष्टिमें न वना हो और स्थूल सृष्टिमें ही बना हो तो कामदेवका टुकडे बना हुआ शरीर प्रातःकालमें भगवानके दर्शन करने कैसे जा सके? यह विचारवान् प्रश्न है। पौषध पारे पहेले, भगवानके दर्शन करनेके लिये श्रावकजी गये हैं; तो थोडे घंटोंमें टुकडे इकठे हो कर संध जाय यह कैसे बन पडे? अतःएव समझा जाता है कि देवता जो कुछ परीक्षा लेते हैं–कसौटी करते हैं, वे मानसिक सृष्टिमें करते हैं। यद्यपि स्थूल भवनपर यह बनाव वनता हो ऐसा उस मनुष्यको भास होता है और स्थूल पीडा कीसी पीडा भी होती है तथापि वे शरीरकी स्थिति नहीं वदलती। योग मार्गमें चढनेवालेको ऐसे अनेक महा भयकर रुप डराते हैं; इतनाही नहीं परंतु सुंदर रुपोंमें फँसाकर नीचे भी डाल देते हैं।

देव देवलोकको गया। यह बात सच है?"

" हां स्वामिन् ! सही है " कामदेवने कहा।

फिर श्री महावीर स्वामी बहुत साधु-साध्वीको उद्देश कर कहने लगेः-" अहो आर्यों ! कामदेव श्रमणोपासकने (श्रावकने) गृहस्थावासमें रहते देव संबंधी उत्पन्न भये हुए उपसर्ग सहन किये तो तुम भी वैसे उपसर्ग सहन करनेको शक्तिमान बनो !।" ये आज्ञा साधु-साध्वीयोंने प्रमाण करी, फिर कामदेव श्रावक अति हर्षित होकर भगवानको वंदन करके जिस दिशासे आये थे उस दिशासे वापिस गये।

कामदेव श्रावक, बहुत छठ-अठमादिक तपश्चर्या करके वीस वर्ष तक श्रावक धर्म पालकर, श्रावककी ११ प्रतिमाका स्पर्शकर, एक मासका संथारा कर अपने आत्माको निर्मल करके, ६० टंक भत्तपानीका अणसण छेद आलोचना-प्रतिक्रमण, समाधि-संतोष पाकर, कालके समयमें काल करके सौधर्म देवलोकमें सुधर्मावतंसक नामके बडे विमानसे इशान कोनेमें अरुणाभ विमानमें चार पल्योपमकी स्थितिसे देवता होगा।

गौत्तमने पूछाः" भगवन् ! कामदेव श्रावक वहांसे आयुष्य पूर्ण कर कहां जायगा ?"

भगवान बोलेः " हे गौत्तम ! कामदेव श्रावक वहांसे चवकर महाविदेह क्षेत्रमें उत्पन्न होकर कर्म क्षय कर मोक्ष पायगा "।

# सार.

कामदेव श्रावकका चरित्र लिखनेमें शास्त्रकारने 'धर्मध्यान' की खूबी समझानेका आशय रक्खा जान पडता है। मनुष्य किसी समय चिंतामें होता है तब कहा जाता है कि वह आर्त्तध्यानमें है। किसी समय गुस्सेमें होता है और अन्यकी बुराइ चाहता है, उस समय वह रौद्रध्यानमें कहा जाता है। किसी समय आत्माके विचारमें मग्न होता है—जड और चेतनका विचार करता है, उस समय वह 'धर्म ध्यान' अथवा 'शुक्ल ध्यान' में माना जाता है।

आर्तध्यान अथवा रौद्रध्यानमें जब मनुष्य होता है तब ऐसा एक तार हो जाता है कि उसे इस बातकी खबर भी नहीं रहती कि उसके आसपासमें क्या हो रहा है। रौद्र ध्यान में चढा हुआ मनुष्य अपनी पत्नीको या बडोंको तरवारसे मारनेको तैयार हो जाता है, उस समयमें हानि लाभका कुछ भी विचार नहीं रहता। आर्तध्यानमें लगे हुए मनुष्यको भूख प्यासका भी विचार नहीं रहता, इतनाही नहीं परन्तु विष खाते दुःख न मानकर प्रसन्नतापूर्वक आत्मघात करता है। इस प्रकार दुर्ध्यानमें लगे हुए मनुष्यको ध्यानके सिवाय कुछ भी नहीं दिखता। तथापि 'धर्मध्यान' करनेवाले मनुष्योंमें बहुतही कम ऐसे होते हैं, जिनकी लगन इस तरह लगती हो। दस मिनट काउसग्ग रहेगा तो मेरे पैर दुःखने लगेंगे, पांच मिनटमें मेरा श्वासोश्वास रुक जायगा और मैं मर जाउंगा, ऐसे ऐसे भयसे धर्मध्यानमें निश्चल नहीं हो सकता। जब निश्चलता होती है तभी आनंद मिलता है। तभी दुःख स्पर्श

नहीं कर सकता, और तभी देवकोप इसको कुछ असर नहीं कर सकता अर्थात् इसका कुछ भी नहीं बिगाड सकता।

पौषध व्रत जो है यह 'धर्मध्यान'का एक उत्तम प्रकार है। आत्माको पोषण करनेके लिये लिया हुआ समय यह पौषध व्रत है। इस व्रतमें शरीरको शृंगारना छोड दिया जाता है और शरीरकी कुछ परवाह भी नहीं रक्खी जाती। जीन्दगी भरमें जो मन दिन रात शरीरके विचारमें मग्न रहता है, उसे इस व्रतमें-शरीरके बजाय शरीरके राजाके ही विचारोंमें लगाया जाता है। इस पौषध व्रतमें रामायण आदि रासोंको पढना, या सुनना, यही आत्मकल्याणका विरोधी समझा जाय तो फिर रोजगार, घरके काम और इधर उधरकी गप्प मारनेवालेके पौषधके लिये तो क्याही कहा जाय?

वैद्य लोग कहते हैं कि, आरोग्यतावाले मनुष्यको भी हर महिने या हर आठवें दिन आरोग्यता रक्षणके लिये एक अच्छा जुलाब लेना चाहिये। शरीरकी सहीसलामती और आरोग्य रक्षण करनेके वास्ते यह इच्छने योग्य है। तथापि हर महिने या हर आठवें दिन एक 'पौषध' होता हो तो मनुष्य स्थूल और सूक्ष्म यह उभय प्रकारके महान् लाभ प्राप्त कर सके। पौषधमें उपवास करनाही पडता है, अतःएव शरीरमें संचित हुआ सारा मल जल जाता है और शरीर निर्मल हो जाता है (यह मेरा कहना तनदुरस्त मनुष्योंके लिये है, न कि बिमार और कमजोरोंके।) और आठ दिन या महिनेभरमें इधर उधर भटक गये हुए विचार एकांत सेवनसे एकत्र होकर मनोबल बढता है।

इस रीतिसे दूना लाभ देनेवाले पौषधव्रतके लिये स्थान एकान्तमें होना चाहिये । एक स्थानपर इकट्ठे होकर बहुत मनुष्योंका पौषध करना संघ निकालने जैसा है ! इसमें आत्माको आत्मिक विचारोंसे पुष्ट करनेका समय नहीं मिलता । प्राचीन समयमें प्रत्येक श्रावक अपने घरमें पौषध-शालाकी कोटरी रखते थे और इस बात पर ध्यान रखा जाताथा कि, उस मकानके वायु मंडलको (याने वातावरणको) अपवित्र विचारका स्पर्श भी न होने दिया जाय ।

आत्माकी पुष्टि करनेके लिये पौषध किया जाता है; तथापि उस पौषधको पालन करनेके लिये भी कुछ होना आवश्यक है । खुराक तो आत्माको भी चाहिये और पौषधको भी । क्यों कि बिना खुराकके शरीर या कोई सांचा नहीं चल सकता । पौषधकी खुराक 'भावना' है । बारों भावनाओंमेंसे किसी एक भावनामें लीन-मग्न-मस्त हो जानेसे सारा दिन उसी भावनामें व्यतीत हो जायगा; तो भी समय किधर गया इसका पता न लगेगा । परन्तु 'भावना' तब ही हो सकती है जब कि वस्तु संबंधी पढा हुआ या सुना हुआ ज्ञान अपने दिमागमें होता है । प्रथम तो गुरु महाराजके पास वस्तु संबंधी ज्ञान प्राप्त करना चाहिये । फिर भावना भाकर पौषधको दृढ करना चाहिये और पौषधसे आत्माका पोषण करना चाहिये । इस रीतिसे क्रमशः आगे बढनेवाला-चढनेवाला पुरुष देवताकी मारसे या लालचसे कभी डिगेगा नहीं । कभी भावना या व्रतको न छोडेगा । और इस प्रकारकी तल्लीनताका नाम ही आनन्द है । यही मोक्षकी बानगी है ।

---

# अध्ययन ३ रा—चूलणीपिया गाथापति.
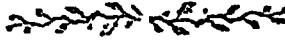
उस काल और उस समयमें वाराणसी नामक नगरी थी। वहां जीतशत्रु राजा राज्य करता था। इस नगरमें चूलणीप्रिया नामक एक गाथापति रहता था। उसकी स्त्रीका नाम था सोमा। वह बडी रूपवाली थी। इस गाथापतिके पास आठ कोटि सुवर्ण भूमिमें गडा हुआ था। आठ कोटिसे व्यौपार करता था। ८ कोटिकी सजावट थी। इसके सिवाय वे आठ गोकुल का स्वामी था।

एक समय भगवान श्री महावीर स्वामी कोष्टक नामक वन—उद्यानमें पधारे, वहां उन्होंको वंदन करनेको चुलणीपिया गया। वन्दन नमस्कार कर उपदेश श्रवण कर आनंद श्रावकके जैसे श्रावक धर्म अंगीकार किया। घर आया। बडे पुत्रको सब घर कार्यभार सुपुर्द कर दिया। आप अपना जीवन धर्ममें व्यतीत करने लगा। स्त्री—पुत्रादिसे पूछ कर पौषधशालामें पौषध करते ग्यारह प्रतिमाको अंगीकार कर विचरने लगा।

एक रोज श्रावकजी पौषध करके बैठेथे, इतनेहीमें आधी रातके समय एक देव कमल कीसी उजली और बीजलीसी चमकती हुई तरवार हाथमें लेकर आया और कहने लगा: "हे चूलणीपिय श्रावक! अप्रार्थित मरणके चाहनेवाले!

बुरी पर्यायोंके धनी! हीन चौदस–पूनमके जन्मे। लज्जा–शोभा–धैर्य-कीर्ति रहित। यदि तू इस व्रतको न तोडेगा तो तेरे बडे बेटेको तेरे घरमेंसे लाकर इस तरवारसे तेरी समक्ष ही काटूंगा और उसके मांसका कबाब तल तल कर तेरे शरीरपर उसके रक्तमांस छांटूंगा। अतःएव तू तीव्र वेदना पाकर आर्तध्यान तथा रौद्रध्यानसे करके अकालमें मरेगा"। परन्तु इससे चुलणीपिया न तो डरा और न धर्मसे चलायमान हुआ। अतःएव वह देव अति क्रोधायमान होता भया। उसने श्रावकके बडे बेटेको लाकर उसके साम्हने काटा। उसके तीन सूलें किये। कढाइमें तलें और उसका लोही मांस श्रावकके उपर छींट दिया। इससे श्रावकको तीव्र वेदना हुइ; परन्तु वे डरा नहीं, न दुःखी हुआ और न धर्मसे विचलित हुआ; प्रत्युत चुपचाप रहा। धर्मध्यानमें लीन बना। इससे देवने चुलणीपियाके विचले लडकेका भी यह हाल किया। और छोटे लडकेका भी। तथापि श्रावक तो अपने धर्मध्यानमें लगा रहा। अखिरमें देवने कहा कि 'अब मैं तेरी मां भद्राकी भी यही गति करुंगा'। तो भी श्रावक नहीं डरा। देवने दुबारा कहा तो भी श्रावक दृढ रहा; परन्तु जब तीसरी बार माता भद्राके बारेमें कहा तो श्रावक चुलणीपिया मनमें सोचने लगा कि "इस पुरुषकी बुद्धि बडी अनार्य है। इसने मेरे तीनों लडकोंको मार डाला और मेरी माताको भी मेरे सामने मारनेका कह रहा है। जो माता देवगुरु समान है, जीने मुझे गर्भमें रखकर पालन किया है, उस माताको मेरे सामने कटती देखूं, यह मेरे लिये ठीक नहीं है। अच्छा, इस दुष्टको अभी पकडूं"। ऐसा विचार कर चुलणीपिया मन, वचन और

कायासे करके उठा और देवको पकडनेको ज्योंही खडा हुआ कि देवता आकाश मार्गसे रवाना हो गया। और चुलणीपियाने थंभा पकड बडे जोरसे हाहू करना शुरु कर दिया। उसे सुनकर भद्रा सेठानी वहां आई और कहने लगी कि—' हे बेटा! अभी तूने बडे जोरसे कोलाहल कैसे किया?' चूलणीपिया बोला—"माता, जाने कोई आदमी मुझपर गुस्से होकर कमलके फूल जैसी उजली और बिजलीसी चमकती हुई तलवार हाथमें लेकर कहने लगा कि—' हे चुलणीपिया! तू व्रत नहीं तोडेगा तो तेरे बडे पुत्रको तेरे सामने अभी मैं मारुंगा, उसके मांसके सूले कर कढाइमें तल उसका लोही मांस तुझपर छिडकूगा।'। इस प्रकार तीन बार कहा परन्तु मैं डरा नहीं। फिर उसने तीनों लडकेको काट कर उसका लोही-मांस मेरे शरीर पर छिडका। मैं फिर भी नहीं डरा और न धर्मसे च्युत हुआ। परन्तु अखीरमें उसने, मेरे परम पूज्य माताजी! उसने आपके लिये भी वैसा ही कहा, वे दो बार तो मैंने सहन कर लिया; परन्तु तीसरी वार मुझसे सहन न हो सका। मैं उसे पकडनेको दौडा तो वे आकाश मार्गसे उड गया और मैं इस थंभेसे लिपट गया और कोलाहल करने लगा"।

भद्रा बोली:—"बेटा! तेरे तीनों पुत्र मौजूद* हैं। उन्हें कोई घरसे नहीं ला सकेगा और न मार सकेगा। कोई देव तुझे उपसर्ग करने आया होगा। उसने तेरे व्रत, पच्चखाण, तप, नियम, सामायिक, पौषधादि सबका भंग किया है। इस लिये

---

* इस प्रकारके जीतने बनाव बनते हैं, वे सब मानसिक सृष्टिमें ही होते हैं। अतः एव प्रत्यक्षसे कोई विरोध नहीं आता।

इसी जगह मन, वचन और कायासे आलोचना कर और प्रायश्चित ले।

चुलणीपियाने माताका कहना मान, वहीं आलोचना कर प्रायश्चित लिया।

चुलणीपिया आनंदजीकी तरह ११ प्रतिमा आदर और कामदेवजीकी तरह अणसण कर सुधर्म देवलोकमें सौधर्मावतंसक नामा बडे विमानके पास ईशान कोनेमें अरुणप्रभ नाम विमानमें चार पल्योपमकी स्थितिसे देवता हुआ। वहांसे महाविदेह क्षेत्रमें उत्पन्न होकर मोक्ष पावेगा।

---

## सार.

कामदेवके चरित्रमें हम दृढ तन्मयताकी भावनाका चित्र देख चूके, कि जिस तन्मयताके सामने कोई संकट या कोई उच्चगुण भी याद नहीं आता। चुलणीपियाके चरित्रमें भी हम ऐसे ही एक पवित्र पुरुषके जीवनका चित्र देखते हैं, परन्तु इसमें वैसी सम्पूर्ण तन्मयता नहीं है। चुलणीपिया तो धर्मकी पूर्ण स्थितिकी अपेक्षा माताके प्रेमकी ओर अधिक ढल पडा। हां, मातृभक्ति अत्यंत प्रशंसनीय बात है, वैसेही पितृभक्ति, कुटुंबवात्सल्य और स्वदेशभक्ति प्रत्येक परोपकारका काम है। परन्तु एक म्यानमें दो तलवार नहीं समा सकती। एक ध्यानमें लगे हुए दिमागमें दूसरा विचार--फिर वे कितनाही उत्तम क्यों न हो--प्रवेश कर नहीं सकता; और यदि प्रवेश करे भी तो ध्यानकी सम्पूर्ण अवस्था नहीं कही जा सकती।

चुलणीपियाने कसौटीमें हार पाइ तो भी दूसरे दिन उसके बच्चे तो जीन्दाही मिले । माताने कसौटीके समय दृढ रहनेही शिक्षा दी, तब वह एक बारकी हारसे कम हिम्मत न हुआ और धर्मध्यानमें प्रयास करता ही रहा। अन्तमें महाविदेह*

---

* My own imagination explains the terms महाविदेह, क्षेत्र, विहरमान & सीमंधर in this way. 'सीमानम् धारयति इति सीमंधरः' सीमंधर is he who holds the सीमन् or boundary i. e. Protector of the Faith, whose responsibility is enormous--say inconceivable. क्षेत्र does not mean *physical* place, it means भुवन or 'plane'. महाविदेह क्षेत्र means that plane or भुवन of life in which a man can exist independant of physical body or औदारिक शरीर. A Sadhu or a Saint can by means of आहारक लब्धि visit सीमंधर स्वामी or the तीर्थंकर (Protector of the Faith) who cannot live in *our* land but who dwells in महाविदेह क्षेत्र i. e. the plane where there is perpetual चतुर्थ युग of joy or आनंद. Now what is this लब्धि? It is that power of concentration or योग which enables a man to quit the physical garb and to travel singly.

विहरमान (Present Participle Adj. of वि with हृ) means sporting, airing. The High Souls in महाविदेह plane do actually move in air or subtle matter and move from one place to another as if sporting. They being full in knowledge feel आनन्द even in airing; hence their विहार is equivalent to *sporting*.

This is what my imagination tells me unaided by any teacher either त्यागी or गृहस्थ.

क्षेत्रमें विहरमान प्रभुके चरणकमलकी भक्ति पाई और अन्तमें मोक्षको प्राप्त होता हुआ। इस परसे यह शिक्षा मिलती है कि विघ्न और पराजयसे अनुभव मिलता है और उन्नतिका (evolutionका) मार्ग साफ होता जाता है। इस वास्ते गिर जाने वालेको बैठ रहना न चाहिये; परन्तु 'घोडे चढेगा सोही गिरेगा' इस कहावतको याद कर फिर उन्नतिके मार्गमें दौड लगानी चाहिये।

---

It *may be* faulty. But I am sure I am not in fault when I believe that *behind* what is preached by Jain Sutras there is *hidden* a treasure of mystic knowledge which when a man knows he will no longer care much for the *words* of Sutras but will persistently try to grasp the *sense* hidden under those simple-looking words.

# अध्ययन ४ था–सुरादेव गाथापति.
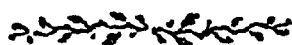
उस काल और उस समयमें बाराणसी नगरी थी। वहां जीतशत्रु राजा राज्य करता था। वहां सुरादेव नामक एक गाथापति था। उसके छ कोटी सुवर्ण जमीनमें गडा हुआ था। छ कोटिसे व्योपार करता था और छ कोटिकी घरकी सजावट थी। इसके सिवाय दस हजार गायोंका एक गोकुल ऐसे छ गोकुलका वे स्वामी था। उसकी स्त्री पांचों इन्द्रियोंसे बडी रुपवाली थी, जिसका नाम था धन्ना।

एक समय महावीर भगवान कोष्टक वनमें पधारे। उन्हें वंदना करने जैसे आनंद गये थे वैसे सुरादेव गाथापति भी गया। भगवानको वंदना नमस्कार कर धर्मकथा सुन आनंदकी भांति श्रावक धर्म अंगीकार किया और घर आकर पौषध आदि धर्मक्रिया करने लगा।

एक समय सुरादेव पौषधशालामें पौषध कर बैठा था। इतनेहीमें आधी रातके समय एक देवता कमलसी उज्वल और विजलीसी चमकती हुई तलवार हाथमें लेकर उसके सामने आ कहने लगा–" हे सुरादेव श्रावक! अप्रार्थित मरणको चाहने वाले! बुरी पर्यायोंके स्वामी! यदि तू इस व्रतको नहीं तोडेगा तो तेरे बेटेको घरसे लाकर तेरे सामने

मारुंगा। पांच शूला कर कढाइमें तल उसका लोही और मांस तेरे शरीरपर छींटूंगा ! जिससे तू तीव्र वेदना भोगकर आर्त-ध्यान और रौद्रध्यानसे मरेगा "। ऐसा कहने पर श्रावक न तो डरा और न धर्मसे चलित हुआ। देवताने दो वार तीन चार कहा, परन्तु श्रावक तो डरे ही नहीं। इससे देवने कुपित होकर श्रावकके बडे लडकेको पकड लाने बाद उसीके सामने मार डाला। उसके पांच शूले किये, कढाइमें तला और उसका रक्त मांस श्रावकके अंगपर छींटा। इससे उसे बडी भारी वेदना हुई, परन्तु डरा नहीं, न दुःखी हुआ, न बोला। प्रत्युत धर्मध्यानमें विशेष निमग्न हो गया। अतः एव देवताने विचले और छोटे पुत्रका भी यह ही हाल किया और उनके लोही मांस को भी वैसे ही श्रावकपर छींटा; तथापि श्रावक न तो डरा और नहीं धर्मसे चलित हुआ।

चोथी दफा देवने कहा कि,—" अहो सुरादेव श्रावक ! यदि तू इस व्रतको न छोडेगा तो तेरे शरीरमें १ श्वास २ कांस ३ दाह ४ ज्वर ५ कुक्षी ६ शूल ७ भगंदर ८ अर्श ९ अजीर्ण १० दृष्टिदुःख ११ गुह्यशूल १२ कर्णशूल १३ उदर-वेदना १४ लिंगशूल १५ मस्तकशूल १६ कोढ यह सोलह रोग प्रगट करदूंगा। अतःएव तू महा वेदना भोग कर अकाल मोतसे मरेगा। इस प्रकार उसने एकवार, दुवारा, तिवारा कहा। इस पर सुरादेव श्रावकने मनमें सोचा कि—'यह पुरुष महा अनार्य मतिका धनी है। इसने मेरे तीनों बच्चोको लाकर मेरे साम्हने मारा और उनके लोही मांससे मेरे शरीरको छींट दिया। इतनेसे बस न कर मेरे शरीरमें सोलह रोग प्रकट करनेको कहता है, यह ठीक नहीं है। इस दुष्टको

पकडूं ।" यों सोचकर ज्योंही उसे पकडनेको जाने लगा कि देवताने आकाश मार्गसे चलदिया। सुरादेव थंभा पकड कर हा हू करने लगा। यह सुन कर उसकी स्त्री धन्ना उसके पास आई और कहनें लगी-'अभी हा हू क्यों कि?' सुरादेवने कहा-"जाने अभी कोई मनुष्य मुझ पर गुस्से होकर एक विजली कीसी चमकती हुई तलवार अपने हाथमें ले मेरे सामने आकर कहने लगा कि-'हे सुरादेव! यदि तू इस व्रतको न छोडेगा तो तेरे तीनों बच्चोंको तेरे सामने इस तलवारसे मारुंगा और पांच शूला कर उन्हें कढाइमें तल उनके लोही मांससे तुझे छींटूंगा, और उसने किया भी ऐसा ही, परन्तु मैं न डरा। अन्तमें मेरे शरीरमें सोलह रोग प्रकट करनेको कहा। और तीन वार कहा। इससे मैं उस दुष्ट पुरुषको पकडने चला तो उसने आकाशमें चल दिया और मैं इस थंभेसे लिपट रहा"।

धन्ना बोली-"अपने तीनों बालक मौजूद हैं। तुम्हें कोई देव उपसर्ग देनेको आया होगा। उसने तुम्हारे व्रत पच्चखाण भंग किये। इस लिये यहीं मन, वचन और कायासे आलोचना कर प्रायश्चित लीजिये"।

तब उस श्रावकने वहीं पर आलोचना कर प्रायश्चित लिया।

फिर सुरादेव श्रावक अणसण कर सुधर्म देवलोकमें अरुणकांत नामा विमानमें चार पल्योपमकी स्थितिसे उत्पन्न हुआ। वहांसे महाविदेह क्षेत्रमें अवतार ले मोक्ष पावेगा।

# सार.

कामदेवने पूर्ण दृढता रक्खी। चुलणीपियाने मातृप्रेम जैसे सद्गुणको अयोग्य समयमें वीचमें डाल तन्मयता गँवाइ और इस सुरादेवने शारीरिक पीडा (बाधा)के भयसे ( केवल स्वार्थसे ) ध्यान खोया। आगे एक अध्ययनमें लक्ष्मीके मोहसे ध्यान भंग करनेका भी दृष्टान्त आवेगा।

ध्यानसे विचलित होनेके ऐसे विविध कारण बताकर छठे अध्ययनमें सच्चे भक्तजनकी भगवानके वचनमें कैसी अडग श्रद्धा होती है इसका दृष्टान्त देंगे।

इन सब कारणोंसे ज्ञात होकर आत्मार्थी पुरुषको अपने प्रयासमें विशेष सावधान होना चाहिये।
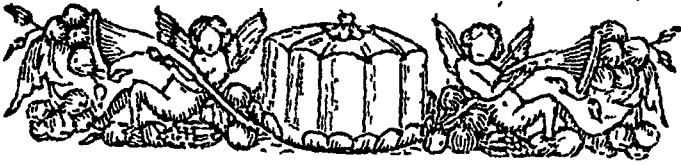
# अध्ययन ५ वां—चूलशतक गाथापति.
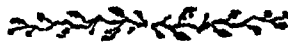
उस काल उस समयमें आलंभिका नाम नगरी थी। जीत-शत्रु राजा राज्य करता था। चूलशतक वहां गाथापति था। छकोटि सुवर्ण भूमिमें गडा था। छकोटिसे व्यौपार चलता था और छकोटिका सामान था। छ गोकुलका स्वामी था। एक गोकुलमें दस हजार गायें थी। उसके स्त्रीका नाम था बहुला।

एक समय भगवान श्री महावीर स्वामी शंख उद्यानमें पधारे। उन्हें वन्दना करने आनन्द श्रावककी भाँति चूलशतक भी गये। भगवानको वन्दना नमस्कार कर धर्मकथा सुनी। आनंदकी तरह श्रावक धर्म अंगिकार किया। घर आये पौषध-शालामें पोषध किया।

एक समय चूलशतक श्रावक पौषधशालामें पोषध कर बैठे हैं। इतनेहीमें आधीरातके समय एक देव आया। उसके हाथमें कमलसी उज्वल बिजली सी चमकती हुइ तलवार थी। वह तलवार दिखाकर श्रावकसे कहने लगा कि—'हे चूलशतक श्रावक! अमार्थित मरणके चाहनेवाले! यदि तू यह व्रतको न छोडेगा तो तेरे तीनों बच्चोंको लाकर तेरे सामने मारूंगा'। (चुलणीपियाकी तरह सब हाल जानना। फरक इतनाही है कि यहां एक एक बच्चेकी सात सात शूलाकी बात हुई)।

यों कह कर अनुक्रमसे तीनों बच्चोंको लाकर उसके सामने मार सात सात शूलेकर कढाईमें तला और उनका लोही मांस इसके शरीर पर छींटा। तो भी चूलशतक श्रावक धर्मसे नहीं डिगे। चोथी वार देव बोला–" हे चूलशतक श्रावक ! यदि तू इस व्रतको नहीं छोडेगा तो मैं तेरे सारे द्रव्यको अर्थात् भूमिमें गडी हुई और व्योपारमें लगी हुई तथा सजावटमें शोभित १८ ही करोड सुवर्णकी लक्ष्मीको आलंभिका नगरीकी गली २ में बिखेर दूंगा। अतःएव तू आर्त–रौद्र ध्यानमें मर जायगा" । इस प्रकार उसने तीन दफा कहा। इतनेमें चूलशतक मनमें सोचने लगा कि " यह पुरुष महा अनार्य मतिका धनी है। इसने मेरे तीनों बच्चोंको तो मेरे सामने मारा और उनका लोही मांस तल मेरे शरीरपे छींटा तथा अब मेरी सारी लक्ष्मीको आलंभिका नगरीमें बिखेर देनेका कह रहा है। यह ठीक नहीं। पकडूं इस दुष्टको।" यों सोच कर जो पकडनेको चला तो देवता आकाशमें उड गया और चूलशतक थंभा पकड कर कोलाहल करने लगा। हा हू सुनकर उसकी स्त्री उसके पास आई और कहने लगी कि " अभी आपने जोरसे हा हू कैसे की?" । चूलशतकने कहाः " जाने कोइ आदमी आया और उसने मेरे तीनों बच्चोंको मेरे सामने मार कढाइमें तला और उसने उनके खूनसे मेरे शरीरको छींटा। ( सारा हाल सुरादेवकी तरह जानना। ) फिर मेरी सारी संपत्ति आलंभिका नगरीमें बिखेर देनेका कहा; अतःएव उस दुष्टको मैं पकडने गया तो उसने आकाश मार्गसे चल दिया और मैं इस थंभेसे लिपट पडा"।

बहुला बोलीः—' अपने तीनों बालक मौजूद हैं। तुम्हें

उपसर्ग देनेको कोइ देवता आया होगा। उसने आपके व्रत पच्चखाणोंका भंग किया। अतःएव यहीं, मन, वचन और काया से आलोचना कर प्रायश्चित्त कर लीजीये"।

श्रावकने वहीं आलोचना कर प्रायश्चित लिया।

चूलशतक अणसण कर सुधर्म देवलोकमें अरुणसिद्ध विमानमें उपजा। वहांपर चार पल्योपमकी स्थिति कर महाविदेह क्षेत्रमें उपज मोक्ष पावेगा.

---

## सार.

अमूल्य पौषध व्रतको अंगीकार किये बाद रोजगारके विचारमें गोते खानेवालोंको भी 'बहुला' जैसी धर्मज्ञ सुपत्नी मिले तो कैसी अच्छी बात हो? कि जो भूल बता कर प्रायश्चित दिलवाके दृढधर्मी बना सके।

# अध्ययन ६ ठा—कुंडकोलिया गाथापति.
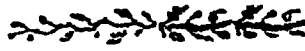
उस काल उस समयमें कंपिलपुर नामक नगर था। वहां का राजा था जीतशत्रु। इसी नगरमें कुंडकोलिक नामका गाथापति रहता था। उसके छ कोटि सुवर्ण भूमिमें गड़ा था। छ कोटिसे व्यौपार करता था और छ कोटिकी सजावट थी। छ गोकुलका धनी था। एक २ गोकुलमें दस २ हजार गायें थी। इसके स्त्रीका नाम था पुसा।

एक समय श्रमण भगवान महावीर सहस्रांव नामक उद्यान में पधारे। उन्हें वन्दना करनेको जैसे आनंद श्रावक गये थे वैसे कुंडकोलिक गाथापति भी गया। वहां भगवानको वंदना कर धर्मकथा सुनी। आनंदकी तरह बारह व्रत अंगीकार किया और जीधर होकर आया था उधर होकर ही घर आया। साधु साध्वीको आहार पानी देते हुए और धर्मक्रिया करते हुए विचरने लगा।

एक समय दिनके पिछले पहरमें कुंडकोलिक श्रावक जहां अशोकवाडी थी वहां आया और पृथ्वीशिला नामके पाटपर अपने नामकी मुद्रा और उत्तरीय वस्त्रको रखकर श्रमण भगवान महावीरके पास ( जो श्रावक धर्म अंगीकार किया उस मतका ) सामायिक व्रत लेकर बैठ गया। उस वक्त एक देवता

आया। उसके नाम वाली अंगुठी और उत्तरीय वस्त्रको कोपसे शिलापट परसे उठाकर घुंघरु बजाता हुआ आकाशमें खडा रहा तथा कहने लगाः—" हे कुंडकोलिक श्रावक ! गोशाला नामक मंखलीपुत्रके धर्ममें उत्थानादि क्रिया, तप, संयम, चारित्र, बळ, पराक्रम, वीर्यके बीना ही कर्मोंका क्षय हो जाता है और मोक्ष मिल जाता है ऐसा कहा है। श्रमण भगवान महावीर के धर्ममें इनके सिवाय मोक्ष नहीं होता ऐसा कहा है। अतः एव गोशाला नाम मंखलीपुत्रका धर्म श्रेष्ठ-सत्य है। सो तू इसे अंगीकार कर और महावीरके धर्मको झूठा मान!" देवकी बात सुन कुंडकोलिकने कहाः-" अहो देव ! तू कहता है कि गोशाला मंखलीपुत्रका धर्म, क्रिया, तप, संयम, आदि के बिना मोक्ष मिले ऐसा उत्तम है और श्रमण भगवान महावीरका धर्म दया, बल, वीर्य और पुरुषार्थ युक्त हैं ठीक नहीं है। तो हे देवताको प्रिय ! तू ऐसी देवताकी पदवी, ऋद्धि, रुप, और सुख ये सब उत्थानादिक क्रियाएं तप, संयम, बळ, तथा पराक्रम विना ही पाया था और किस तरह ? और अब जो जीव उत्थानादि क्रिया तप आदि नहीं करते हैं उनकी मोक्ष होगी या नहीं ? "

कुंडकोलियाकी यह बात सुन कर देवको संदेह हो गया और पीछा कुछ भी उत्तर न दे सका। चुपचाप उस अंगुठीको और उत्तरीय वस्त्रको पीछे पृथ्वी शिलापट्ट पर रखदिये। तथा जिस दिशासे आया था उसी दिशासे चला गया।

उस काल उस समयमें श्रमण भगवान महावीर स्वामी पधारे। इसे सुनकर, हर्ष--संतोष पा, जैसे कामदेव श्रावक

वंदना करने गया था वैसे ही कुंडकोलिक वन्दना करने गया। धर्मकथा हो चूकनेपर महावीर स्वामी कुंडकोलिकसे कहने लगे--"हे कुंडकोलिक श्रावक ! कल पिछले पहरमें तू अशोक-वाडीमें सामायिक लेकर बैठा था। उस समय एक देव तेरे पास प्रकट हुआ और तेरे नामकी अंगुठी और वस्त्रको लेकर पीछा रखकर चल दिया। क्या यह बात सच है ?" कुंडको-लिकने कहा--'हां, महाराज ! सत्य है।' भगवान महावीर बोले--'धन्य है तुझे। तू कामदेव श्रावककी तरह धर्ममें दृढ रहा'। इसके बाद भगवानने बहुत साधु-साध्वीको बुलाकर कहाः--" अहो आर्यों ! कुंडकोलिक गृहस्थी होनेपर भी अन्य-तीर्थी और अन्य शासनके देवके भी प्रश्न करने पर न हारा। फिर तुम तो द्वादशांगीके जाननेवाले हो। तुम्हें तो ऐसा होना चाहिये कि अन्यतीर्थीको जीत सको"। सब साधु—साध्वाने उस बातको तहत कहा और विनयपूर्वक प्रशंसा की। यह सुन कर कुंडकोलिया हर्ष--संतोपको प्राप्त भया। भगवान महावीरकी उसने प्रदक्षिणा की--वंदना की--और जिस दिशासे आया था उस दिशासे होकर घर गया। और महावीर भगवान जनपदमें विहार कर विचरने लगे।

कुंडकोलियाने १४ वर्ष शीलादि पाले। १५ वर्षमें बडे लडकेको घरका भार दिया, कामदेवकी तरह, और पौपधशालामें श्रावककी ११ प्रतिमा स्वीकार की। अन्तमें अणसण करके सुधर्म देवलोकमें अरुणध्वज विमानमें देवता हुआ। वहां चार पल्यो-पमकी आयु पूरी कर महाविदेह क्षेत्रमें अवतर कर मोक्षमें जायगा।

# अध्ययन ७ वा–सद्दालपुत्र.
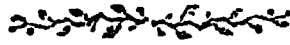
उस काल उस समयमें पोलासपुर नाम नगर था। सहस्रांववन वाग था। जीतशत्रु राजा राज्य करता था। वहां सद्दालपुत्र कुम्हार रहता था, जो वडा धनवान था। गोशाला उर्फ मंखलीपुत्रका उपासक था। वे गोशालाके मतमें प्रवीण था और उसमें उसकी हड्डीर रंगी हुई थी। वह अपने धर्मके सिवाय अन्य सव धर्मोंको अनर्थ जानता था। एक कोटि सुवर्ण उसके जमीनमें गडा हुआ था। एक कोटि सुवर्णसे व्यौपार करता था और एककोटिकी घरमें सजावट थी। और उसके एक गोकुल दस हजार गायोंका था। उसके अग्निमित्रा नामा स्त्री थी। पोलासपुरके वहार उसकी ५०० दुकानें थी। उसके वहुतसे नौकर थे। वह नाना भांतिके घडे, मटकीयां, कुंजे, झारीयें और कुडले आदि वर्तन तैयार करता था और राजमार्गपर उसकी दुकान थी, वहां व्यौपार करता था।

एक दिवस सद्दालपुत्र (गोशालाका श्रावक) अशोक वाडीमें गोशालाके धर्मकी प्रज्ञप्ति लेकर वैठा था। इतनेमें उसके पास एक देव प्रकट हुआ और आकाशमें खडा रहकर घुंघर वजाता हुआ, वस्त्राभूषण पहने हुए, कहने लगाः--"हे

देवानुप्रिय श्रावक! यहां पर कल प्रातःकालमें एक महापुरुष आवेंगे। वे ज्ञान और दर्शनके धरनेवाले, त्रिकालज्ञ, अरिहंत केवली, सर्वदर्शी, त्रिलोकवासी देव-मनुष्य-असुरादिकको पूजनीक और सर्ववन्द्य हैं। तू उनकी त्रिकरण योगसे सेवा करना। उनोंको पाढीआर, पीढ, फलग, शैय्या, संथारा तथा वस्त्र और पात्र करके निमंत्रण करना"। इस प्रकार तीन वार कहके देवता जिस दिशासे आया था उस दिशासे वापस गया।

दूसरे दिन प्रातःकाल श्रमण भगवान महावीर चरम तीर्थंकर पधारे। उन्हें वन्दना करनेको बारह परिषद् गई। वन्दना पर्युपासना की। इस वातको सुनकर सद्दालपुत्रने मनमें सोचा कि, गोसालक तो आया नहीं है और ये तो श्रमण भगवान श्री महावीर विचर रहे हैं। इस लिये मैं अभी जाउं। देवने कहा था सो उन्हे जा कर वन्दना करुं, सेवा करुं। यों सोच, शुद्ध हो, सुंदर वस्त्र पहन, बहुत मनुष्यके समुदायसे निकला और पोलासपुरके वीचोंवीच होकर सहस्त्रांबवन बागमें जहां महावीर स्वामी विराजमान थे गया। उन्हें वन्दना कर पर्युपासना की। भगवानने सद्दालपुत्र और बारह परिषद्के साम्हने धर्मकथा कही। फिर सद्दालपुत्रसे कहाः—" हे सद्दालपुत्र! कल पिछले पहरमें अशोक वाडीमें खडे रह कर एक देवने तुझसे कहा कि, 'कल एक महापुरुष आयगा उसकी सेवा भक्ति करना' यह वात सच है?" सद्दालपुत्र वोलाः—"हे स्वामिन् सच है।" फिर देवके कहने मुजब सद्दालपुत्रने महावीर स्वामीको वन्दना कर कहा "हे भगवन्! पोलासपुर नगरकी वाहर मेरी पांचसैा कुम्हारकी दुकानें हैं। वहां पर आप पाढीआर,

पीढ, फलग, शैय्या, संथारा, उपकरण और औषधि जो चाहिए सो लेते विचरना"। ऐसा कहनेसे श्रमण भगवान श्री महावीर सद्दालपुत्रके ५०० दुकानसे प्राशुक, एषणीक, पाढीआर-पीढ-फलग-शय्या-संथारा-उपकरण-औषधि आदि लेते हुए विचरने लगे।

एक वक्त मिट्टीके कच्चे वर्तनोंको दुकानके बाहर धूपमें सूकते हुए देखकर सद्दालपुत्रसे महावीर स्वामीने पूछा कि-"अहो सद्दालपुत्र! ये मिट्टीके वर्तन कैसे हुए?" सद्दाल-पुत्रने कहा-"हे पूज्य! यह पहेले मिट्टी थी। उसे पानीसे भिजोया। छोटी मोगरीसे एकत्र करके पिंड बनाया। फिर चाक पर चढाकर हाथसे जैसा चाहा घाट बनाया।" श्रमण भगवान बोले-"अहो सद्दालपुत्र! ये कच्ची मिट्टीके वर्तन उत्थान, बल, वीर्य या किसी प्रकारके भी पुरुपार्थ या परा-क्रमके विना ही हो गये?" सद्दालपुत्र बोला-"हे भगवन्! उत्थान, बल, वीर्य, पराक्रम या पुरुपार्थ कुछ नहीं है। सब भाव नित्य है"।

इसके बाद श्रमण भगवान महावीर स्वामी सद्दालपुत्रसे कहने लगे:"अहो सद्दालपुत्र श्रावक! तेरे कच्चे, पक्के वर्तनों-को कोई तेरे सामने ही तोड-फोड दे, छीन ले और तेरी भार्या अग्निमित्राके साथ संसारके सुख भोगे तो तू उसे क्या दंड दे?"। सद्दालपुत्र बोला-"हे भगवन्। मैं उसे गाली दूं, बांध दूं। और मारुं"। भगवान बोले-"हे सद्दाल-पुत्र! उत्थातादि क्रिया पराक्रम कुछ नहीं है और सब भाव नित्य है। यदि तू यह कहता है तो तेरा अपराध करने-

वालेको दंड कैसे देगा ? और इन सब बातोंको प्रत्यक्ष देखना भी झूट है क्या ? "। इससे सद्दालपुत्रको ज्ञान हुआ। वह श्रमण भगवानको नमस्कार कर बोला-"मैं कहता हूं कि आपसे जो धर्म सुना वोही उत्तम है"।

इस के बाद श्रमण भगवानने परिषद्के बीचमें बड़ी भारी धर्मदेशना दी। उसे सुन हर्ष संतोष पा कर आनंद श्रावककी भांति बारह व्रत अंगीकार कर, भगवानको वंदना-नमस्कार कर पोलासपुर नगर के बीचोंबीच होकर घर आया। अपनी स्त्री अग्निमित्राको भी भगवानको वंदना करने जानेकी आज्ञा दी।

स्वामीकी आज्ञाको मान कर अग्निमित्रा स्नान कर मूल्य-वान वस्त्राभूषण पहन कर अठारह देशकी दासीयोंको साथ ले कर रथमें बैठे भगवानको वन्दना करने गई। वहां पर न तो भगवानसे बहुत दूर खडी रही, न बहुत पास ही। फिर वन्दना कर धर्मकथा सुन हर्ष संतोष पाई। श्रावकके बारह व्रत अंगीकार किये। रथपर बैठ कर जीधर हो कर आई थी उधरसे ही घर पहुंच गई। इसके बाद एक समय महावीर स्वामी सहस्रांब वनसे निकल कर जनपद, देश, नगर, और गामको विहार करने लगे।

मंखलीपुत्र गोशालेने, सद्दालपुत्रके, महावीरके पास बारह व्रत अंगीकार करनेकी बात सुनी। सोचा कि मैं सद्दाल-पुत्रके पास जाउं और उसे पीछा मेरा धर्म अंगीकार कराउं। यों विचार कर संघ समुदायको लेकर पोलासपुर आया और अपने स्थानकमें उतरा। वहांपर वस्त्र तथा पात्रादि उपकरणों-को रखकर जहां सद्दालपुत्र था वहां आया। गोशालाको आता

देख सद्दालपुत्रने उसे मान नहीं दिया, नमस्कार नहीं किया, सामने देखा भी नहीं और बोला भी [illegible]। गोशालाने आदरसत्कार न हुआ देख कर पाट, [illegible]लग, शय्या, संथारा और औषध मिलनेकी लालचसे श्रमण भगवान महावीरके गुण गाता हुआ कहाः—" अहो सद्दालपुत्र श्रावक! यहां पहले एक महात्मा आये थे ? "। सद्दालपुत्रने कहा—" महा-माहण (किसी जीवको न मारो ऐसा उपदेश करनेवाले पुरुष) श्रमण भगवान महावीर पधारे थे। उनको 'महामाहण' कहनेका सवब क्या है?।" गोशालाबोला-"वे उपनेज्ञान, दर्शन, और चारित्रके धनी हैं। चोसठ इन्द्रोंके पूजनिक हैं। और वन्दनीय हैं। महागोप, महा सार्थवाह, महा धर्मकथाके कहनेवाले और महा-निर्यामिक * ऐसे श्रमण भगवान महावीर हैं। " सद्दालपुत्रने पूछा—" यह किस तरह ? " गोशालाने कहा—"अहो देवानु-प्रिय ! संसार रुप जंगलमें दुःख पाते हुए जीवोंकी रक्षा करते हैं वास्ते महागोप हैं। हिंसक जीवोंसे भय पाये हुए जीवों-को इधर उधर भटकने देकर संसाररुपी वनमें मार्गभ्रष्ट नहीं होने देते, इस लिये महा सार्थवाह हैं। संसारमें चार गतिमें भ्रमण करनेवाले सब जीव सुन सके ऐसी धर्मकथा करते हैं, इस लिये महा धर्मकथाके कहनेवाले हैं। संसारमें डूबते हुए जीवको धर्मरुपी नौकामें विठा कर पार उतारने वाले हैं, अतः एव महा निर्यामिक हैं। " सद्दालपुत्र यह सुन कर वोलने लगा—" मेरे धर्माचार्य ऐसे विज्ञानवंत और समर्थ ही हैं तो तुम उनके साथ वादविवाद मत करना"। गोशालाने कहा—"अहो

---

१ पाटीया (*Board, Tablet,*)

* निर्यामक—नोका चलाने वाले.

सद्दालपुत्र ! वलवान्, कलावान और चढती वयका जवान पुरुष शूकर, मुरगा, तीतर आदि जानवरोंको हाथ पैर, पूंछ, कान जहांसे पकडेगा वहींसे वे जानवर जीच हो जायगा अर्थात् छूट नहीं सकेगा। वैसे ही महावीर स्वामी जो २ प्रश्न पूछेंगे उनका उत्तर मैं नहीं दे सकता। अतः एव मैं विवाद भी नहीं कर सकता।" सद्दालपुत्र बोला–" हे देवानुप्रिय। तुमने मेरे धर्मगुरु महावीर स्वामीका गुण कीर्तन किया इस लिये ( धर्मके लिये नहीं )। मैं तुम्हें पाढीआर, पीढ, फलग, शैय्या, संथारा आदिसे निमंत्रण करता हूं। इस लिये मेरी कुम्हारकी दुकानसे उपरकी वस्तुएं लेते हुए विचरो और उपसंपदा लेकर वहां सुखसे विराजो।" ऐसा कहनेसे गोशाला सद्दालपुत्रकी दुकानसे उपरकी वस्तुएं लेता हुआ विचरने लगा। परन्तु सद्दालपुत्र गोशालाके विनीत वचनोंसे चलायमान नहीं हुआ। क्षोभित भी नहीं हुआ और न कुछ भी शंकाको प्राप्त हुआ। इससे गोशाला हार कर पोलासपुरमेंसे निकल कर *जनपद देशमें विहार करने लगा।

सद्दालपुत्रको शीलादि व्रत पालते हुए चौदह वर्ष वीत गये। पंदराहवें वर्ष धर्मकी प्रज्ञप्ति लेकर पौषधशालामें वैठा था। ऐसे समय मध्य रातमें एक देवता हाथमें कमलसी उजली और बीजलीसी चमकती हुई तलवार लेकर साम्हने आया और चूलणीपियाकी तरह कष्ट देने लगा। एक एक पुत्रके नो नो शूले किये। तीनें पुत्रोंको मारा। लोही और मांस सद्दालपुत्रके उपर छींटा। तथापि सद्दालपुत्र धर्मसे नहीं

* जनपद=राज्य Kingdom, Country.

डिगा। इससे वह चौथी वार कहने लगा–"यदि तू इस व्रतको नहीं छोडेगा तो अभी तेरी स्त्री अग्निमित्राको भी मारुंगा और शूले कर उसके रक्तमांससे तेरे शरीरको छींटूंगा। जीससे तू आर्तध्यान, रौद्रध्यानसे मरेगा।" यों तीन बार कहा। अतःएव सद्दालपुत्रको चूलणीपियाकी तरह संकल्प उठा। इससे देवको पकडनेको गया तो देव आकाश मार्गसे रफु चक्कर हुआ और सद्दालपुत्र थंभेसे लिपट गया। यहांसे आगे सारा अधिकार चुलणीपियाकी तरह जानना। इतना विशेष कि मरकर अरुणव्यय नाम विमानमें देवता हुआ। वहांसे महाविदेह क्षेत्रमें उपज कर मोक्ष जावेगा।
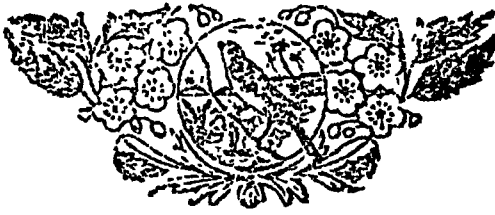
# अध्ययन ८ वा—महाशतक.
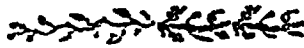
उस काल उस समयमें राजग्रही नाम नगरी थी। वहां गुणशील नाम चैत्य था। वहां श्रेणिक राजा राज्य करता था। महाशतक नामका गाथापति था। आठ कोटि सुवर्ण जमीनमें गडाथा। आठ कोटिसे व्यापार होता था और आठ कोटिकी सजावट थी। ८ गोकुलका धनी था। जिसमें ८०००० गायें थी। उसके रेवती आदि लेकर तेरह स्त्रियां थी। उसमें रेवतीके पिहरसे आठ कोटि सुवर्ण और आठ गोकुळ आये थे। और वारह स्त्रियोंके पीहरसे भी एक एक गोकुल और एक एक कोटि सुवर्ण आया था।

उस काल उस समयमें श्रमण भगवान महावीर पधारे। उन्हें वन्दना करनेको परिषद् गई। जैसे आनंद श्रावक वन्दना करनेको गये थे वैसे ही महाशतक भी गया। वहां भगवानको वन्दना नमस्कार कर आनंदकी तरह श्रावक धर्म अंगीकार किया। इसमें इतना विशेष कि आठ हिरण्य कोटि भाजन और आठ व्रज गोकुल और रेवती आदि तेरह स्त्रियोंके सिवाय मैथुनका त्याग किया।

एक समय गाथापत्नि रेवतीको आधी रातमें ऐसा अध्यवसाय उत्पन्न हुआ कि मेरे बारह शोकैं (सहपत्नी) हैं अतएव मैं

महाशतकके साथ मनुष्य संबंधी उदार भोग नहीं भोग सकती। इससे यदि बारह शोकोंको अग्निसे, शस्त्रसे या विषसे मार डालूं तो इनका बारह कोटि सुवर्ण और बारह गोकुल मिल जाय तथा मैं बडे चैनसे मनुष्यके भोग भोगूं। ऐसा सोच कर शोकोंका मारनेका प्रस्ताव, छलछिद्र, समय और एकान्त स्थल आदि ढूंढने लगी। कुछ दिनोंके बाद एकान्त स्थल और मौका मिला। छ शोकोंको उसने शस्त्रोंसे मारी और छको विषसे। उनोंकी दौलत और गायोंकी मालिक बन बैठी और संसारके भोग भोगने लगी। बहुत प्रकार मांसके शूलादि कर तेलमें तल मदिराके साथ खाती हुई विचरने लगी। इसके थोडे दिनोंके बाद श्रेणिक राजाने राजग्रहीमें ढिंढोरा पीटा कि कोई जीवहिंसा न करे। इससे गाथापत्नी रेवती अपने पीहरसे मिले हुए गोकुलमेंसे रोज दो बछडे मंगवाती और उन्हें मार खाती हुई विचरने लगी।

अब महाशतक गाथापति १४ वर्ष पर्यन्त शीलादि व्रत पाल १५ वें वर्ष बडे पुत्रको सब कारभार सुपुर्द कर पौषधशालामें श्रावककी ग्यारह प्रतिमा अंगीकार कर विचरने लगे। एक समय मद्य मांस खानेवाली रेवती महामदसे उन्मत्त हो कर खुल्ले बाल रख, खुले शिर बडे मोहक श्रृंगार कर पौषधशालामें महाशतकके पास आई। तथा अंगोपांगसे हावभाव करती कहने लगी—"अहो महाशतक श्रावक! आप पौषधको ही धर्मका, पुण्यका, स्वर्गका काम समझकर मेरे साथ भोग नहीं भोगवते हो यह ठीक नहीं है।" इस प्रकार उसने तीन वार कहा परन्तु श्रावकने उसकी ओर देखा तक नहीं। आदर सत्कार नहीं दिया। चुप चाप धर्मध्यानमें रह

विचरने लगा। इससे रेवती हारी और उदास होकर जीधरसे आईथी उधरही होकर चल दी और अपने घर गई।

महाशतक श्रावक सूत्रकी विधिसे ११ प्रतिमा पालते विचरने लगे। इससे उसका शरीर लुहारकी विना पवन भरी धौंकन कासा निर्मांस पोला हो गया। एक समय रातमें धर्म जागरिका जागते हुए उन्हें ऐसा अध्यवसाय उत्पन्न हुआ कि जैसे आनंद श्रावकने सब परिग्रह और चार प्रकारके आहार छोड संथारा किया वैसे मैं भी कल्ल प्रातःकालमें करुं। ऐसा विचार कर उसीके अनुकूल धर्मध्यानमें विचरते हुए, शुभ परिणामसे कर्म क्षय होकर अवधिज्ञान उत्पन्न हुआ। इससे पूर्व और दक्षिण दिशामें लवण समुद्र तक हजार योजनका क्षेत्र दिखने लगा। पश्चिम और उत्तर दिशामें चूल हिमवंत और वर्षधर पर्वत तक तथा नीचे रत्नप्रभा नामकी पहली नरकका लोलुचुय नामका पाथडा दिखाइ देने लगा।

एक समय रेवती गाथापत्नी उपरकी तरह पौषधशालामें जा कर महाशतक श्रावकसे बार २ मोहक वचन कह कर भोगकी वांछा करने लगी। इससे महाशतकको क्रोध आ गया और उसने कहा कि " अरे अप्रार्थित मरण चाहनेवाली रेवती! तू अवश्य सात दिन रातके भीतर भीतर अलस रोग से मरेगी और आर्तध्यान रौद्रध्यान करती हुई असमाधि मरण पावेगी। रत्नप्रभा नरकमें लोलचुय पाथडमें पड चौरासी हजार वर्ष दुःख भोगेगी। " ऐसे वचन सुन कर रेवती डरी और भाग कर घरको आ गई। इसके बाद सात अहोरातमें वह अलस रोगसे आर्तध्यान कर मरी और ८४००० वर्षकी आयुसे रत्नप्रभा नरकके लोलुचिय नाम पाथडमें जा उपजी।

उस काल उस समयमें श्रमण भगवान महावीर पधारे। उन्हें वन्दना करनेको परिषद् गई। धर्मोपदेश सुन सब पीछे आये। इसके बाद श्रमण भगवान महावीरने गौतमसे कहा– "हे गौत्तम। इस राजगृहीमें मेरा अंतेवासी (शिष्य) महाशतक श्रावक है। उसने पौषधशालामें अखिरी मरण समयकी संलेखना कर धर्मध्यानमें विचरते हुए अवधिज्ञान उत्पन्न हो जाने पर अपनी स्त्री रेवतीके मोहक वचनोंसे क्रुद्ध होकर उससे कहा कि–'हे रेवती गाथापत्नी! तू सात अहोरातमें अलस रोग उत्पन्न होकर मरेगी और रत्नप्रभा नरकमें जायगी।' हे गौत्तम! श्रमणोपासक श्रावकको अखिरी संलेखनामें सद्विद्यमान सच्ची बात होनेपर भी अमनोज्ञ और कठोर वचन कहना योग्य नहीं है। * तुम महाशतकको जा कर कहो कि तुम यहीं आलोचना करो, निन्दो और प्रायश्चित लो।" इस तरह कहनेसे श्री गौत्तम स्वामी राज-

---

* यहां पर हमें 'नो खलु कप्पइ गोयमा! समणोपासहस्स अपिच्छिमे अकंतेहीं अप्पीएहीं अमणुनेहीं वागरजेही " आदि पढते २ 'मनुस्मृति'का श्लोक याद आता है. पाठक मिलावें कि अप्पीएहीं से क्या समानता है:—

सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात् सत्यमप्रियं
प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः ॥

मनुस्मृति अ. ४ श्लोक १३८

सच बोलो और प्रिय बोलो। उस सचको मत कहो जो प्रिय नहीं है। उस प्रियको भी न बोलो जो सच नहीं है। यही सनातन धर्म है। पाठकगण! शास्त्रकारोंके वचन कैसे एक दूसरेसे मिलते हैं यह इस संमेलसे कुछ २ ध्यानमें आ सकता है। ढूंढने वालोंको ऐसी बहुतसी बातें मिल सकती हैं।

( हिन्दी अनुवादक )

गृहीमें होकर महाशतकके पास गये और उपरकी बात कही। महाशतकने गौतम स्वामीके वचनको तहत् कर आलोचना की, प्रतिक्रमण किया और प्रायश्चित लिया। पिछे गौत्तमस्वामी भगवान महावीरके पास आये। वन्दना नमस्कार किया, १७ भेदसे संयम व १२ भेदमे तप करते विचरने लगे। इसके बाद भगवान महावीर जनपद देशमें विहार कर विचरने लगे।

महाशतकने २०. वर्ष. तक श्रावक धर्म पाला। ११ पडिमाको स्पर्श किया। एक मासकी संलेखना कर अपनी आत्माको शोपा। साठ भक्त आहारका अणसण किया। पापोंकी आलोचना की। समाधिवंत हो, कालके वक्त पर काल कर सुधर्म देवलोकमें अरुणावतंसक विमानमें चार पल्योपमकी स्थितिसे देव हुआ। वहांसे महाविदेह क्षेत्रमें उपज मोक्ष पावेगा।

# अध्ययन ९ वां-नंदिनीपिय.
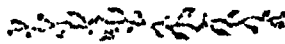
उस काल उस समयमें सावथ्थी नाम नगरी थी। वहां पर कोष्ठक नाम वन था। वहांका राजा था जीतशत्रु और नंदिनीपिय गाथापति था। ४ कोटि सुवर्ण उसके भूमिमें गडाथा। चार कोटिसे व्यौपार चलताथा और चार कोटिका सामान था। ४ गोकुल ( ४०००० ) गायोंका धनी था। उसकी स्त्रीका नाम था:अश्विनी।

उस काल उस समयमें श्रमण भगवान महावीर पधारे। उन्हें वन्दना करनेको परिषद् गई। नंदिनीपिय गाथापति भी गया। भगवानका उपदेश सुन आनंदकी तरह श्रावकके बारह व्रत अंगीकार कर पीछा लौटा। परिषद् भी पीछी लौटी। इसके बाद श्रमण भगवान महावीर स्वामी जनपद देशमें विहार करते हुए विचरने लगे।

नंदिनीपीय श्रावक धर्म स्वीकार कर जीवदया पालता हुआ विचरने लगा। चौदह वर्ष तक बहुत शीलादि पाले। १५ वें वर्ष बडे पुत्रको घरका काम दिया। धर्मकी उपसंपदा ले २० वर्षकी पर्याय पाली। शुभ ध्यानसे अरुणंग विमानमें देवता होकर उपजा। वहांसे महाविदेह क्षेत्रमें उपज मोक्ष पावेगा।
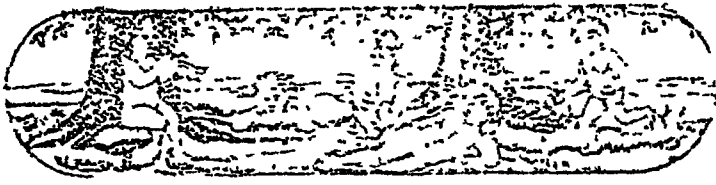
# अध्ययन १० वा-सालिहीपिय.
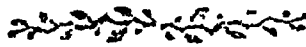
उस काल उस समयमें सावथ्थी नगरी थी। कोष्टक वन था और जीतशत्रु राजा था। सालिहीपिय था गाथापति। ४ कोटी सुवर्ण उसके भूमिमें गडाथा। चार कोटिसे व्यौपार होताथा और चार कोटिकी सजावट। ४०००० गायके चार गोकुलका धनी था। उसकी स्त्रीका नाम फाल्गुनी था।

उस काल उस समयमें श्रमण भगवान महावीर पधारे। उनके पास. सालिहीपिय(सालिनीप्रिय)ने आनंदकी तरह गृहस्थ धर्म अंगीकार किया। कामदेवकी तरह बडे पुत्रको घरबारका काम दे कर उपसंपदा लेकर पौपधशालामें महावीर स्वामी चरम तीर्थंकरकी धर्म प्रतिज्ञा ले कर बैठा और धर्मध्यानमें विचरने लगा। इतना विशेष कि उपसर्ग रहित श्रावककी ग्यारह प्रतिमा भली भांति परिवहन की। शेष सब कामदेवकी तरह जानना। सुधर्म देवलोकमें अरुणकील विमानमें देवता हो कर ४ पल्योपमकी स्थितिसे उत्पन्न हुआ। वहांसे महाविदेह क्षेत्रमें हो मोक्ष पावेगा।

---

—दसों श्रावकोंको १५ वें वर्ष धर्म करनेकी चिंता हुई और दसों श्रावकोंने २० वर्ष तक श्रावकका पर्याय पाला। ॐ शान्तिः